उत्तर प्रदेश, भूमि सुधार और वंचित वर्ग

उत्तर प्रदेश, भूमि सुधार और वंचित वर्ग

उत्तर प्रदेश, भूमि सुधार और वंचित वर्ग

अप्रैल 2017

सर्वाधिकार सुरक्षित © पैरवी, नई दिल्ली

आलेखः अजय शर्मा

संपादनः अजय झा

आवरण व पृष्ठ संयोजनः रजनीश श्रीवास्तव

प्रकाशकः

पैरवी

ई-46, आधार तल, लाजपत नगर-3, नई दिल्ली-110024

दूरभाषः 011-29841266, 65151897

ईमेलः pairvidelhi@rediffmail.com, pairvidelhi1@gmail.com

वैबसाइटः www.pairvi.org

आमुख

उत्तर प्रदेश जनसंख्या के हिसाब से देश का सबसे बड़ा राज्य है। आर्थिक व सामाजिक जनगणना 2011 के अनुसार उत्तर प्रदेश की आबादी का एक बड़ा हिस्सा कृषि भूमिहीन हैं और इन भूमिहीन परिवारों में अधिकांश दलित व वंचित समुदाय के परिवार हैं। आजादी के बाद प्रदेश में भूमि सुधार एवं पुनर्वितरण की दिशा में कई प्रयास किये गए, परंतु इन प्रयासों में समग्रता और व्यापकता के साथ-साथ राजनैतिक इच्छाशक्ति का भी घोर अभाव था। लिहाजा भूमि का समान वितरण नहीं हो सका। इन सभी भूमि सुधार कानूनों के बनने और लागू होने के बाद भी दलितों ओर मुस्लिमों की ज्यादातर आबादी भूमिहीन है। प्रदेश सरकार के द्वारा अब तक जो भी भूमि वितरित की गयी हैं, उसमें से अधिकांश पुरुषों के नाम की गई है जिस कारण महिलायें भूमि के मालिकाना हक से वंचित हैं। वंचित समुदाय के लिए जमीन का सवाल आजीविका के साथ ही उनके सम्मान, पहचान और जिन्दगी का भी सवाल है।

अंधाधुंध और असतत विकास की सबसे अधिक मार जमीन पर ही पड़ रही है। विकास के नाम पर खेती का रकबा घटता जा रहा है। खेती योग्य भूमि पर गैर खेती का कार्य बढ़ रहा है। औसतन 40-50 हजार हेक्टेयर भूमि हर साल गैर कृषि कार्य में लगाई जा रही है। लघु कृषक सीमांत होते चले जा रहे हैं। भूमि अधिकार गरिमामय जीवन के लिए एक आवश्यक शर्त है। भूमिहीन व्यक्ति गरिमा के साथ जीवन नहीं जी सकता है। जमीन का मालिकाना हक वंचितों को न सिर्फ आर्थिक रूप से सशक्त करता है बल्कि सामाजिक अस्मिता प्रदान करता है और राजनातिक रूप से भी मजबूत करता है।

हम मानव अधिकारों की रक्षा और गरिमापूर्ण जीवन की वकालत करते रहे हैं। यह पुस्तिका हमारे इसी प्रयास की एक कड़ी है। यह पुस्तिका उत्तर प्रदेश में भूमि सुधार और वंचितों के जमीन के अधिकार की पड़ताल करती है।

हम श्री अजय शर्मा (अमलतास, लखनऊ) के आभारी हैं, जिन्होंने उत्तर प्रदेश में भूमि सुधार और जमीन के मालिकाना हक के बारे में जानकारी उपलब्ध

करा कर इस पुस्तिका के प्रकाशन में महत्वपूर्ण सहयोग दिया है। श्री शर्मा काफी लम्बे समय से भूमि सुधार और वंचितों के जमीन के हक की पैरोकारी करते आ रहे हैं। हम उम्मीद करते हैं कि यह प्रयास राज्य सरकार का ध्यान इस विषय की ओर आकृष्ट करेगा।

आशा है हमारा यह प्रयास आपको पसंद आएगा।

धन्यवाद।

अजय झा
निदेशक
पैरवी, नई दिल्ली

अनुक्रमणिका

क्रम	विषय	पृष्ठ संख्या
1	भूमिका	5
2	ऐतिहासिक पृष्ठभूमि	7
3	भूदान	19
4	भूमि अधिकार में महिलाओं की स्थिति और उत्तराधिकार	22
5	दलित समुदाय की भूमिहीनता और जमीन का सवाल	28
6	आदिवासियों की स्थिति	32
7	बटाईदार किसानों का संकट	35
8	नई राजस्व संहिता	39
9	भू-अधिग्रहण और घटता हुआ खेती का रकबा	43
10	भारत में भूमि सुधार एक मूल्यांकन	47
11	हमारी पैरोकारी	52
12	परिशिष्ट-१	54
13	परिशिष्ट-२	58
14	परिशिष्ट-३	61
15	परिशिष्ट-४	64

भूमिका

जमीन का सवाल मानव समाज के लिए हमेशा से महत्वपूर्ण रहा है। खेती के जीवन का आधार बनने, और फलस्वरूप मनुष्यों के एक सामाजिक इकाई के रूप में संगठित होने के बाद से ही, लगातार मानव समाज, जमीन पर अपने अधिकार को लेकर संघर्षरत है। वैसे तो सामाजिक ढाँचे में परिवर्तन के साथ-साथ भूमि व्यवस्था भी बदलती रही है। किन्तु ब्रिटिश शासकों द्वारा इस देश में अपनाई गई, भूमि सम्बन्धी नीतियों ने हजारों वर्षों से चली आ रही परम्परागत व्यवस्था में आमूल-चूल परिवर्तन कर दिया। परम्परागत रूप से अपना प्रबन्ध संचालन स्वंय करने वाले ग्रामीण समुदाय को उसकी प्रशासनिक भूमिका से वंचित कर दिया गया। किसान जो पहले जमीन के मालिक थे, उनकी मिल्कियत छीन ली गई, और वो लगान दे कर दूसरे की जमीन पर खेती करने वाले काश्तकार बन गये। इस प्रकार अधिकांश जोतों को बंधक रहने और कर्जदार होने की समस्या का सामना करना पड़ा। यह प्रकिया जैसे-जैसे आगे बड़ी, किसानों का एक बड़ा हिस्सा भूमिहीन मजदूर बन गया, जिसका सर्वाधिक खामियाजा दलित-वंचित समुदाय को उठाना पड़ा, यह मेहनतकश समुदाय पूरे ब्रिटिश काल में लगातार भूमिहीन होता गया। आजादी आंदोलन के दौरान भी और स्वतंत्रता के पश्चात् नई सरकार के गठन के वक्त भी जमींदारी के खात्में और काश्तकारी में बदलाव व भूमिहीनों का सवाल महत्वपूर्ण बन कर उभरा, और इसी पृष्ठभूमि में उत्तर प्रदेश जमीदारी विनाश एवं भूमि व्यवस्था अधिनियम-1950 पारित हुआ।

ऐतिहासिक रूप से आधी आबादी अर्थात महिलायें भी संपत्ति के अधिकार अथवा जमीन के अधिकार से वंचित रही हैं। भूमि अधिकार की दृष्टि से महिलाओं का इतिहास वंचना का इतिहास रहा है। इस मामले में सभी धर्मों की महिलाओं की वास्तविक स्थिति में कभी कोई अन्तर नहीं रहा, अतएव क्षेत्र, जाति और वर्ग के आधार पर कुछ अंतर जरूर रहा। इसी तरह बटाईदार किसान हों या भूमिहीन खेतिहर मजदूर इनकी व्यथा का भी अंत नहीं हुआ। इसी के साथ ही कृषि भूमि का बढता गैर कृषि उपयोग एक नये संकट के रूप मे सामने आया है।

लगातार खेती की जमीनों का कम होते जाना, यह सिर्फ भोजन के अधिकार का ही उल्लंघन नहीं है, बल्कि यह मानवाधिकारों का भी उल्लंघन है।

वैसे तो उत्तर प्रदेश जमीदारी विनाश एवं भूमि व्यवस्था अधिनियम-1950 में समय-समय पर संसोधन होते रहे हैं, किन्तु 11 फरवरी, 2016 से प्रदेश में नई राजस्व संहिता लागू की गई है, और इस प्रकार भू-विधि राजस्व संहिता से संचालित हो रही है। यह पुस्तिका वंचित समुदाय के लोगों, उनके भूमि अधिकारों के लिए काम कर रहे साथियों, जन-संगठनों या जमीन के सवाल को समझने के लिहाज से सभी के लिए महत्वपूर्ण होगी, इसी विश्वास के साथ...

अजय शर्मा

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

भारतीय समाज में पराम्परागत रूप से राजा भूमि का स्वामी नहीं माना गया है, वह प्रजा के कब्जे की भूमि की उपज में ही हकदार माना गया है। जमीन में जो खेती करता था, भूमि उसी की होती थी। किन्तु भूमि का स्वामित्व संयुक्त परिवार में निहित होता था, न कि संयुक्त गाँव-समाज में। खेतिहर भूमि के अतिरिक्त परती भूमि, सार्वजनिक चारागाह, जलाशय, मन्दिर आदि ग्राम समुदाय की सम्पत्ति माने गये हैं।

शासन की सबसे छोटी इकाई गावँ होती थी और गाँव का एक मुखिया हुआ करता था। भूमि उपज में राजभाग या मालगुजारी पूरे गाँव में निर्धारित की जाती थी। यह मालगुजारी मुखिया द्वारा व्यक्तिगत किसानों पर भूमि के क्षेत्रफल और उर्वरा शक्ति के आधार पर विभाजित कर दी जाती थी। गाँव के सभी स्थायी निवासियों का यह दायित्व था कि मालगुजारी अदा करें। किसानों में मालगुजारी के समान व उचित विभाजन करने के लिए और मालगुजारी के अदायगी के लिए जिम्मेदार होने के कारण गाँव के मुखिया की हैसियत बहुत महत्वपूर्ण होती थी। अधिकांश परिस्थितियों में मुखिया का पद वंशानुगत था, किन्तु कहीं-कहीं गाँव समुदाय द्वारा उसका चुनाव भी होता था। लेकिन उसका यह चुनाव राज्य द्वारा स्वीकृति दिये जाने के बाद ही महत्वपूर्ण होता था।

मुस्लिम काल

देश की भूमि व्यवस्था में मुस्लिम शासकों ने कोई मौलिक परिवर्तन नहीं किया। भूमि में व्यक्तियों के अधिकार, उनमें आपसी सम्बन्ध व उनमें और राज्य के बीच सम्बन्ध पहले के जैसे ही चलते रहे। शुरूआती दौर में मुस्लिम शासकों ने स्थानीय शासकों (राजाओं को) को कर के अधीन तो रखा, लेकिन राज्य के अन्दरूनी शासन में कोई हस्तक्षेप नहीं किया। इस पूरे दौर में भी भूमि का स्वामित्व राजा में निहित नहीं रहा। राजा का अधिकार मालगुजारी या कर वसूलने का ही रहा, अर्थात

उसे भूमि से कर पाने का ही अधिकार रहा, न कि उसके स्वामित्व में। यहाँ तक इलाहाबाद किले को बनवाने के लिए सम्राट अकबर को खुद भूमि खरीदनी पड़ी।

टोडरमल बन्दोबस्त

भूमि वयवस्था में अकबर के शासन काल में किया गया टोडरमल-बन्दोबस्त बहुत ही महत्वपूर्ण है। इस दौरान के मालगुजारी की व्यवस्था में अन्य सभी करों को हटाते हुए, जो मनमर्जी पर आधारित थे, जमीन की उर्वराशक्ति और क्षेत्रफल के आधार पर मालगुजारी निर्धारित की गई। टोडरमल द्वारा किया गया बन्दोबस्त रैयतवारी बन्दोबस्त था, जिसमें किसान भूमि के मालिक होते थे। गाँव के मुखिया या कर उगाहने वाले मध्यवर्तियों को उनकी सेवाओं के बदले में उन्हें कुछ धनराशि नकद दी जाती थी, या उन्हें मालगुजारी मुक्त भूमि दी जाती थी, जिसे माफी भूमि भी कहते थे।

मुगल-साम्राज्य के पतन और अंग्रेजी राज्य के स्थापित होने के दरमियान अर्द्ध-जमींदारों की भी वृद्धि हुई। जैसे-जैसे राजसत्ता ढीली होती गई, लोगों की सम्पत्ति की सुरक्षा भी कम होती गई। धीरे-धीरे ग्रामीण समुदाय मालगुजारी एकत्र करने वाले राज्य के अधिकारियों से मदद लेने लगा। परिणाम यह हुआ कि मालगुजारी एकत्र करने वाले ने गाँव के मुखिया का अधिकार विस्थापित कर दिया और भूमि पर स्वामित्वाधिकार ग्रहण करना प्रारम्भ कर दिया, और जब देश में अंग्रेजी शासन कायम हुआ तो वे तालुकेदार या जमींदार अंग्रेजी शासन के द्वारा संरक्षित किये गये और अपने प्रदेशों के वे व्यवहारिक स्वामी माने गये।

ब्रिटिश काल

उत्तर प्रदेश के भूभाग अंग्रेजों के कब्जे में 1775 ई० से 1857 ई० एक-एक कर कई बार में आये। बनारस प्रान्त अंग्रेजों को अवध के नवाब से संधि में प्राप्त हुआ। उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में अंग्रेजों के पास केवल बनारस डिवीजन (सोनभद्र को छोड़कर) और इलाहाबाद का किला था। बाकि शामिल किये गये जिले 1801 ई० में अवध के नवाब द्वारा ब्रिटिश को दे दिये गये। इसमें आजमगढ़, मऊनाथभंजन, देवारिया, गोरखपुर, महराजगंज, सिद्धार्थनगर, बस्ती, इलाहाबाद, फतेहपुर, कानपुर, इटावा, मैनपुरी, एटा, शाहजहाँपुर, बरेली, बदायूँ, पीलीभीत और बिजनौर जिला शामिल था। 1803 ई० के मराठा युद्ध में कुछ और जिले आगरा, बुलन्दशहर, गाजियाबाद, मेरठ आदि जिले मिलाये गये। बुन्देलखण्ड में बांदा एवं हमीरपुर जिले 1803 ई० से 1817 ई० के बीच मिलाये गये, जालौन, झांसी व ललितपुर 1842 ई० में ब्रिटिश राज्य में मिलाये गये, और आखिर में अवध का

प्रान्त 1856 ई० में ब्रिटिश राज्य में मिला लिया गया। सभी जीते गये और मिलाये गये क्षेत्र बंगाल प्रेसीडेन्सी के अधीन गर्वनर जनरल के नियंत्रण में रखे गये। सन् 1833 ई० के गवर्नमेंट ऑफ इण्डिया एक्ट द्वारा आगरा प्रेसीडेन्सी कायम की गई और अवध को छोड़कर लगभग पूरा क्षेत्र आगरा प्रेसीडेन्सी में शामिल किया गया। किन्तु इस योजना का कार्यान्वयन न हो सका। 1835 में इण्डिया (नार्थ-वेस्टर्न प्राविन्सेज) एक्ट पास हुआ, और फिर अवध को छोड़कर पूरे भू-भाग का नाम नार्थ-वेस्टर्न प्राविन्सेज रखा गया और उसके लिए एक लेफ्टीनेन्ट गवर्नर (उप-राज्यपाल) नियुक्त किया गया। अवध प्रान्त का शासन चीफ कमिश्नर के अधीन रखा गया। दोनो प्रान्तों के मुख्य शासक अलग-अलग व्यक्ति बनाये गये। सन् 1877 के एक्ट ऑफ यूनियन द्वारा दोनो प्रान्तों का प्रशासन एक ही व्यक्ति में निहित कर दिया गया। किन्तु दोनो प्रान्त अलग-अलग बने रहे। 1902 ई० में दोनों प्रान्त एक में मिला दिये गये और उसका नाम संयुक्त प्रान्त आगरा व अवध रखा गया। गवर्नमेंट ऑफ इण्डिया एक्ट-1935 ई० ने इस नाम में से शब्द आगरा व अवध हटाकर इसका नाम संयुक्त प्रान्त रखा गया, 24 जनवरी 1950 ई० को इस प्रान्त का नाम उत्तर प्रदेश हो गया।

सन् 1950 ई० तक के इतिहास में बनारस, अवध और आगरा क्षेत्रों के लिए अलग-अलग भूमि व्यवस्थायें अपनाई गईं।

बनारस का स्थायी बन्दोबस्त

बनारस में, जिसमें जौनपुर, बलिया, गाजीपुर, आजमगढ़ तथा मिर्जापुर का भी कुछ भू-भाग था, जमीदारों के साथ स्थायी बन्दोबस्त किया गया, और जमींदारों को सारी जमीन का मालिक मान लिया गया, और इस स्थायी बन्दोबस्त के साथ ही आधुनिक जमींदार अथवा जमींदारी प्रथा की शुरूआत हुई। स्थायी बन्दोबस्त के पहले राज्य और किसान के बीच कोई बीचौलिया या मध्यवर्ती नहीं था। केवल माजगुजारी के ठेकेदार और मालगुजारी वसूलने वाले किसान थे, जिनका भूमि पर कोई स्मामित्व नहीं होता था। ये लोग सिर्फ मालगुजारी वसूलते थे, जो किसानों द्वारा सरकार को देय होती थी। ब्रिटिश सरकार के पहले इतिहास में ऐसा कभी नहीं हुआ था कि किसान मालगुजारी वसूलने वालों की मर्जी से भूमि के मालिक बने रहें, या फिर मालगुजारी वसूलकर्ता को उपज में राज्य के हिस्से के अलावा मांगने का कोई अधिकार हो। इससे पहले कभी भी मालगुजारी वसूलकर्ता को भौमिक अधिकार प्रदान नहीं किये गये।

अवध की तालुकदारी

सन् 1856 ई० में अवध अंग्रजी राज्य में मिला लिया गया, लेकिन अगले ही साल 1857 में स्वतंत्रता का प्रथम संग्राम शुरू हो गया। जब यह आन्दोलन दबा दिया गया तो 1858 में लार्ड कैनिंग द्वारा घोषणा की गई की कुछ इलाकों को छोड़कर पूरे अवध प्रान्त का भूमि सम्बन्धी अधिकार ब्रिटिश सरकार द्वारा जब्त किया जाता है, और आगे जैसा उचित समझा जायेगा वैसा प्रबन्ध किया जायेगा। इस घोषणा के बाद चीफ कमिश्नर अवध द्वारा एक सर्कुलर-पत्र जारी किया गया, जिसमें भूतपूर्व हो चुके सभी तालुकेदारों को भौमिक अधिकार का अनुदान लेने के लिए लखनऊ बुलाया गया। कुछ तालुकेदारों ने इस पर विश्वास नहीं किया और गिरफ्तारी के भय से नहीं आये, लेकिन ज्यादातर तालुकेदार निमंत्रण स्वीकार करते हुए उपस्थिति हुए। इसी बैठक में लगभग सभी तालुकेदारों को वे जागीरें दे दी गई, जो 1856 ई० में उनके पास थीं। जिन्होंने स्वतंत्रता संग्राम में भाग लिया था और अब भी राजभक्त होने का वादा नहीं किया, ऐसे लोगों को उनकी तालुकेदारी वापस नहीं की गई, और इस प्रकार ब्रिटिश शासकों द्वारा जमींदारी प्रणाली स्थापित की गई।

तालुकदार का अर्थ होता है, अधीन व्यक्ति। ये सभी लोग (तालुकदार) ब्रिटिश काल के पहले मालगुजारी वसूलने वाले ठेकेदार थे। 1858 में लार्ड कैनिंग की घोषणा द्वारा न केवल भूमि का स्वामित्वाधिकार जब्त किया गया था, बल्कि हर किस्म का भूमि अधिकार जब्त किया गया था, न सिर्फ छोटे-छोटे किसान उखाड़ फेके गये, बल्कि छोटे जमींदार भी, जो बीसों वर्ष से भूमि का उपयोग कर रहे थे, उन्हें भी खत्म कर दिया गया। किन्तु इस नई व्यवस्था द्वारा सभी तालुकदार अंग्रेजी व्यवस्था के हमेशा के लिए मित्र बन गये। इन तालुकदारों में अधिकांश वो लोग थे, जिन्होंने भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन को दबाने में मदद की थी, या जिन्होंने अंग्रेजो के जानमाल की रक्षा की थी। इसी के साथ ही तालुकदारों को सनद (प्रमाणपत्र) दिये गये और सनद में वर्णित भू-भाग उन्हें और उनके उत्तराधिकारियों के लिए हमेशा के लिए इन शर्तों के साथ दे दिये गये, कि वह राजभक्त बने रहेंगे और भूमि के लगान की आय का आधा सरकार को मालगुजारी देते रहेंगे।

सर जॉन स्ट्रैची जब अवध के नये चीफ कमिश्नर हुए तब छोटे जमींदारों के कुछ अधिकारों को भी मान्यता दी गई और तालुकदारों से एक समझौता हुआ, जिसे अवध कम्प्रोमाइज कहा जाता है। इस समझौते के आधार पर दो अधिनियम पारित किये गये, अवध सब सेन्टिलमेंट, 1866 और अवध रेन्ट एक्ट, 1868। अवध सब सेन्टिलमेंट, 1866 के अनुसार छोटे जमींदारों को उनके अधिकार दे दिये गये, किन्तु क्योंकि ये भू-भाग तालुकदारों को दिये जा चुके थे, इसलिए इन

जमींदारों को मातहत-स्वामी माना गया, अर्थात ये तालुकदारों के मातहत रहेंगे और उन्हें प्रवर स्वामी मानेंगे। मातहत स्वामी को भूमि का पूर्ण मालिक माना गया, वे केवल नाममात्र के लिए तालुकदार के मातहत रखे गये। अवध रेन्ट एक्ट, 1868 के तहत दखीलकारी अधिकारों को कुछ मान्यता दी गई, किन्तु बाद में इसे भी सामाप्त कर अवध रेन्ट एक्ट, 1886 बनाया गया और गैर-दखीलकारी काश्तकारों को संरक्षण प्रदान किया गया, अर्थात वो पाँच वर्ष तक बेदखल नहीं किये जायेंगे और उनका लगान बढ़ाया नहीं जायेगा।

आगरा का बन्दोबस्त

पहले इसका नाम १८३५ तक नाथ-वेस्टर्न प्राविन्सेज था, किन्तु बाद में 1902 ई० में इसका नाम आगरा प्रान्त रखा गया और इसमें बनारस तथा अवध को छोड़कर उत्तर प्रदेश के बाकि जिले शामिल कर लिये गये।

इस बीच भूमि विधि में जितने भी अधिनियम पारित हुए या कानून बने, जमींदारों द्वारा की जा रही मनमानी से बेदखली और लगान वृद्धि होती रही, और किसानों में असंतोष बढ़ता गया। 1921 से 1925 के बीच एक बड़ा किसान आन्दोलन चला, जिसकी प्रमुख मांग थी नजराना बन्द हो, बेदखली बंद हो। आन्दोलन के दबाव में सरकार इन मांगों को मानने के लिए सिद्धान्ततः तैयार हो गई। इस समय प्रान्तीय विधानमण्डल में जमींदारों का बहुमत था, और उन्होंने इसका विरोध किया। फिलहाल दो नये अधिनियम पारित हुए। अवध रेन्ट (संशोधन) अधिनियम, 1921 और आगरा टेनेन्सी एक्ट, 1926। ये दोनो अधिनियम समझौते के परिणाम स्वरूप पारित हुए थे, इस प्रकार किसानों को सुरक्षा प्रदान किया गया तो जमींदारों को भी कुछ अधिकार दिया गया। जैसे आगरा टेनेन्सी एक्ट, 1926 ने पहले के गैरदखीलकार काश्तकारों में से अधिकांश काश्तकारों को अधिनियमित काश्तकारों में बदल दिया। यानि की ऐसे काश्तकार को यह हक होगा, कि वह भूमि को आजीवन उपयोग करता रहे, उसकी मृत्यु पर उसका उत्तराधिकारी पाँच साल तक भूमि पर काबिज रहेगा। पाँच साल समाप्त होने पर जमींदार यदि अधिनियमित काश्तकार के उत्तराधिकारी को इस पाँच साल की समाप्ति से तीन वर्ष के अन्दर बेदखली की प्रक्रिया चालू नहीं करता है, तो यह उत्तराधिकारी अधिनियमित काश्तकार बन जाता है, और फिर उसको यह अधिकार हो जाता है कि वह आजीवन भूमि का उपयोग करे और उसके मरने के बाद उसका उत्तराधिकारी करे। काश्तकारों में खातों को बँटवारा जमींदार की अनुमति के बिना भी संभव होग गया और काश्तकारो में भूमि-विनिमय का

अधिकार दिया गया, किन्तु यह विनिमय एक ही श्रेणी वाले काश्तकारों में हो सकता है। किन्तु यहाँ जमींदार की सहमति आवश्यक था। सबसे महत्वपूर्ण था जमींदारों द्वारा लिया जाने वाला नजराना अवैध करार दे दिया गया, और अनाज लगान का नकदी में परिवर्तन का काम सरकार स्वतः कर सकती थी, किन्तु अब काश्तकार या जमींदार की प्रार्थना पर अनाज का परिवर्तन किया जा सकता था।

अवध रेन्ट (संसोधन) अधिनियम, 1921

यह अधिनिमय अवध प्रान्त, जिसमें मौजूदा लखनऊ, फैजाबाद कमिश्नरी और प्रतापगढ़ जिला शामिल था के काश्तकारों और जमींदारों को सम्बन्ध को बेहतर बनाने और किसानों की कृषि की सुरक्षा और उचित लगान बनाये रखने के उद्देश्य से पारित किया गया था। इससे महत्वपूर्ण बदलाव यह आया कि गैर-दाखिलकार काश्तकार जो अधिक समय से पट्टे पर भूमि को जोत-बो रहे थे, उन सभी को अधिनियमित काश्तकार बना दिया गया, चाहे पट्टे की शर्तें कुछ भी क्यों न रही हों। ये नये काश्तकार भूमि को अपने जीवनकाल तक उपयोग कर सकते थे, और उनके उत्तराधिकारी भी 5 वर्ष तक भूकि का उपयोग कर सकते थे, और यदि यह उत्तराधिकारी 5 वर्ष के पूर्व ही मर जाये तो उसका भी उत्तराधिकारी 5 वर्ष तक भूमि का उपयोग कर सकते थे। भूमि का दाखिला करते समय जमींदार जो नजराना लेते थे, उसे अवैध बना दिया गया, इसके साथ ही भूमि का लगान पर उठाने के पर और प्रतिबन्ध लगा दिया गया। किन्तु इन सबके बाद भी काश्तकारों के लगान में वृद्धि करने का अधिकार जमींदारों को और ज्यादा दे दी गई, और जमींदारों की काश्तकारों पर पकड़ और ज्यादा हो गई। इन सबका परिणाम यह रहा कि किसानों को शोषण और बढ़ गया।

ये दोनो एक्ट अपने उद्देश्य में सफल न हो सके। जमींदारों द्वारा मनमानी बेदखली जारी रही, और वो अपनी खुदकाश्त और बढ़ाते रहे और लगातार किसानों का शोषण करते रहे। बल्कि इन अधिनियमों ने जमींदारों के हाथ को और मजबूत किया। 1935 ई० के गवर्नमेंट ऑफ इण्डिया एक्ट के अन्तर्गत जब प्रान्तीय विधानमण्डलों का चुनाव हुआ, जमींदारों के वर्ग का विधानमण्डल से सफाया हो गया, और कांग्रेस मंत्रीमण्डल बनाया गया। इस मंत्रीमण्डल ने किसानों की दशा को सुधारने के लिए और भूमि सुधार के लिए यू०पी० काश्तकारी अधिनियम, 1939 पारित किया, और जमींदारी समाप्ति का आन्दोलन प्रारम्भ किया गया। सबसे बड़ी बात यह रही की आगरा और अवध दोनो प्रान्तों में भूमि विधियों को एकीकरण कर दिया गया, अर्थात दोनो प्रान्तों में ही यू०पी० काश्तकारी

अधिनियम, 1939 लागू कर दिया गया। इस अधिनियम की सबसे बड़ी विशेषता यह रही कि काश्तकारों को स्वाभाविक परिस्थितियाँ उपलब्ध कराई गईं तथा बेगार और नजराना को पूरी तरह वर्जित कर दिया गया। इससे पहले जब कोई किसान बकाया लगान नहीं दे पाता था तो अपनी भूमि से बेदखल कर दिया जाता था, और किसान से लगान की वसूली की जाती थी। किन्तु इस अधिनियम द्वारा यह व्यवस्था की गई कि किसान के भूमि से बेदखल होने के बाद जमींदार उसकी अन्य सम्पत्तियों से लगान को वसूल नहीं कर सकेगा और इस प्रकार से बेदखल होने पर लगान अदा की गई मान ली जायेगी।

जमींदारी प्रथा

भारतीय परम्परागत सिद्धान्तों एवं विचारों के विरोध में अंग्रजी राज्य की देन रही। किन्तु प्रथम विश्वयुद्ध के बाद जब किसानों में जागृति आई तो उन्होंने इस दमन के रूप में देखा और किसानों का असंतोष ही किसान आंदोलनों का कारण बना। किसाना आन्दोलनों के कारण ही 1921 ई० में अवध रेन्ट (संशोधन) अधिनियम और 1926 ई० में आगरा काश्तकारी अधिनियम पास हुआ। किन्तु इससे भी किसानों के कष्टों का निवारण नहीं हुआ। इस बीच यह अनुभव किया गया कि जमींदारी प्रथा की समाप्ति के बिना किसानों की परिस्थितियों में जरूरी बदलाव नहीं हो सकता। 1935 ई० के लखनऊ अधिवेशन में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने जमींदारी उन्मूलन का सिद्धान्त स्वीकार किया और जब पहला कांग्रेस मंत्रीमण्डल बना तो भूमि सुधार का कार्य नये ढंग से लिया गया और यू०पी० काश्तकारी अधिनियम 1939 पारित करके किसानों की दशा सुधारने का प्रयत्न किया गया। लेकिन जमींदारी प्रथा को सामाप्त नहीं किया गया। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद जब 1946 ई० में विधानमण्डल का चुनाव होने को था तो कांग्रेस ने इस विषय को अपने चुनाव घोषणापत्र में रखा। फलस्वरूप कांग्रेस ने राज्य में अपना मंत्रीमण्डल बनाया तो जमींदारी प्रथा के उन्मूलन के लिए आवश्यक कार्यवाही शुरू हुई। 8 अगस्त, 1946 को उत्तर प्रदेश राज्य विधानसभा ने जमींदारी प्रथा के उन्मूलन के सिद्धान्त को स्वीकार करते हुए एक प्रस्ताव पास किया, जिसमें कहा गया कि यह विधानसभा इस प्रान्त में जमींदारी प्रथा, जो कृषक और राज्य के बीच मध्यवर्तियों से युक्त है, के उन्मूलन के सिद्धान्त को स्वीकार करती है तथा यह निश्चय करती है कि ऐसे मध्यवर्तियों के अधिकार उचित मुआवजा दे कर अर्जित कर लिये जायें और सरकार एक समिति नियुक्ति करे जो इस उद्देश्य के लिए योजना तैयार करे।

इसी उद्देश्य से जमींदारी उन्मूलन समिति का गठन किया गया, जिसके अध्यक्ष उस समय के मुख्यमंत्री गोविन्द वल्लभ पंत और उपाध्यक्ष हुकुम सिंह बनाये गये। ए०एन० झा और अमीर रजा समिति के सचिव बनाये गये तथा इस समिति में इन चार लोगों के अलावा 13 और भी सदस्य शामिल किये गये, जिनमें कमलापति त्रिपाठी और चौधरी चरण सिंह आदि थे। इस समिति को मुख्य रूप से तीन विषयों पर विचार करना था।

1. जमींदारी प्रथा के उन्मूलन का सिद्धान्त स्वीकार करना और जमींदारों के अधिकारों के अर्जन के लिए मुआवजा निर्धारण का सिद्धान्त निश्चित करना।
2. प्रदेश में जमींदारी उन्मूलन पर जो जोतदारी व्यवस्था होगी, उसका मूल सिद्धान्त क्या होगा।
3. भूमि व्यवस्था की नई योजना लागू करने का प्रशासकीय संगठन क्या होगा, और सरकारी मालगुजारी एवं देयों की वसूली का कौन-सा साधन होगा।

समिति ने कई बैठके करने के बाद अपनी रिर्पोट अगस्त, 1948 में प्रस्तुत किया। समिति की सिफारिशों के आधार पर सरकार द्वारा विधेयक तैयार किया गया और 7 जुलाई, 1949 को उत्तर प्रदेश विधानसभा में उत्तर प्रदेश जमींदारी विनाश एवं भूमि व्यवस्था विधेयक पेश किया गया। कई अवस्थाओं से गुजरते हुए यह विधेयक संसोधित रूप में 10 जनवरी, 1951 को विधानसभा द्वारा और फिर 16 जरवरी 1951 को विधान परिषद द्वारा पारित कर दिया गया। 24 जरवरी, 1951 को राष्ट्रपति ने इस अधिनियम पर अपनी स्वीकृति दी और 26 जनवरी, 1951 को यह उत्तर प्रदेश के असाधारण गजट में प्रकाशित किया गया और इसी दिन से यह अधिनियम लागू हो गया। इस बीच जमींदारों द्वारा इलाहाबाद उच्च न्यायालय में कई याचिकायें दायर की गईं, अंततः 1 जुलाई 1952 ई० को उत्तर प्रदेश गजट में पुनः प्रकाशन हुआ, और जमींदारों के सब स्थान राज्य सरकार में निहित हो गये। ज्ञातव्य हो कि इसी दिन से 1360 फसली वर्ष का आरम्भ होता है।

दरअसल स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व प्रदेश में जमींदारी व्यवस्था के अन्तर्गत, एक ही क्षेत्र में निवास और कृषि कार्य करने वाले कृषकों के भौमिक अधिकार समान नहीं थे। पूरे प्रदेश में चौदह प्रकार की जोतदारियाँ व्याप्त थीं। जिसे सरकार द्वारा समाप्त करके भूमि जोतने वाले व्यक्तियों के अधिकारों को सुरक्षा प्रदान करने

के उद्देश्य से दिनांक 1 जुलाई, 1952 से उत्तर प्रदेश जमींदारी विनाश एवं भूमि व्यवस्था अधिनियम, 1950 लागू कर दिया तथा मध्यवर्तियों के सभी अधिकारों को समाप्त करते हुए सिर्फ चार प्रकार को जोतदार- भूमिधर, सीरदार, अधिवासी और आसामी बना दिये। (हलांकि अब नई राजस्व संहिता के अनुसार चार प्रकार की खातेदारी ही होगी। पहला-संक्रमणीय अधिकार वाला भूमिधर, दूसरा-असंक्रमणीय अधिकार वाला भूमिधर, तीसरा-आसामी और चौथा-सरकारी पट्टेदार)

- **संक्रमणीय अधिकार वाला भूमिधर-** भूमि में जोतदार का अधिकार स्थायी, वंशानुगामी और संक्राम्य है, अर्थात वह भूमि को बेच सकता है अथवा स्थानान्तरित कर सकता है।
- **असंक्रमणीय अधिकार वाला भूमिधर-** भूमि में जोतदार का अधिकार स्थायी, वंशानुगामी होता है, किन्तु संक्राम्य नहीं होता है, अर्थात वह भूमि को बेच नहीं सकता है, अथवा स्थानान्तरित नहीं कर सकता है।
- **आसामी-** जब कोई अक्षम भूमिधर अपनी भूमि किसी अन्य को लगान पर देता है तो लगान पर लेने वाला ऐसा व्यक्ति असामी कहलाता है। इस तरह का जोतदार अथवा भूमिधर के अधिकार वंशानुगामी होते हैं, किन्तु स्थायी और संक्राम्य नहीं होता है।
- **सरकारी पट्टेदार-** इसमें राज्य सरकार द्वारा प्रदान की गई भूमि को पट्टे की शर्तों एवं प्रतिबन्धों के अधीन धारण करना होता है।

लेकिन उत्तर प्रदेश जमींदारी विनाश एवं भूमि व्यवस्था अधिनियम, 1950 लागू हो जाने को बाद भी यह पाया गया कि कुछ ऐसे भी काश्तकार हैं, जिनके पास नियत सीमा के बावजूद भी उनके कब्जे में 12.5 एकड़ से अधिक जमीन मौजूद है, तथा वे उस अधिक भूमि से ज्यादा उत्पादन प्राप्त कर सकने में सक्षम नहीं है और साथ ही समाज में एक ऐसा वर्ग भी मौजूद है, जो भूमिहीन है तथा उसके जीविकोपार्जन का मुख्य साधन खेती के समय किये जाने वाले कृषि सम्बन्धित कार्य हैं। इसी उद्देश्य से राज्य विधानसभा में 5 सितम्बर, 1960 को एक विधेयक उत्तर प्रदेश अधिकतम जोत सीमा आरोपण विधेयक, 1960 पेश किया, जिसका मुख्य उद्देश्य यह था कि प्रदेश का प्रत्येक काश्तकार अपनी अधिकतम जोतसीमा से अधिक भूमि धारण न कर सके और यदि पाई जाती है तो उसे सर्वप्रथम अतिरिक्त भूमि घोषित कर शासन द्वारा भूमिहीनों में वितरित कर दी जाये या उसका भाग सार्वजनिक उपयोग में प्रयोग कर लिया जाये। बहरहाल

यह अधिनियम उत्तर प्रदेश साधारण गजट में दिनांक 3 जनवरी, 1961 को प्रकाशित कर लागू कर दिया गया। किन्तु यही पर अपवादिक स्थिति में शैक्षणिक संस्थायें, कृषि विश्वविद्यालय या अन्य प्रकार के सामाजिक हितों में स्थापित एवं चलाई जाने वाली संस्थाओं को छूट भी दी गई। सीलिंग एक्ट के अंतर्गत सरकार द्वारा 3,69,362 एकड़ कृषि योग्य भूमि सीलिंग सरप्लस घोषित की गयी, जिसमें से लगभग 2,63,225 एकड़ भूमि ही भूमिहीन परिवारों में वितरित की जा सकी, जो प्रदेश की कुल जोत भूमि का मात्र 0.58 प्रतिशत ही है।

छोटी काश्त के किसानों के हितों को ध्यान में रखते हुए उनकी निजी जोत या पट्टे पर प्राप्त होने वाली भूमि का स्वामित्व मिलने के पश्चात् विक्रय करने से भी धारा'161-क जोड़ कर प्रतिबन्धित कर दिया गया। किन्तु बढ़ती हुई आबादी और एकल परिवारों के बढ़ते हुए चलन को देखते हुए, उक्त प्रतिबन्ध को उक्त धारा में वर्ष 2004 में जमींदारी विनाश एवं भूमि व्यवस्था (संशोधन) अधिनियम-2004 द्वारा चक के टुकड़े कर विक्रय करने से समाप्त कर दिया।

उत्तर प्रदेश जमींदारी विनाश एवं भूमि व्यवस्था अधिनियम की जमींदारी प्रथा की सामाप्ति के साथ ही कई और तरह की भी विशेषतायें रहीं, जैसे-

- जमींदारी व्यवस्था को समाप्त होने के साथ ही नवीन जोतदारी व्यवस्था भी लागू की गई, पुरानी व्यवस्था की जगह सिर्फ चार तरह की जोतदारी रखी गई, भूमिधर, सीरदार, अधिवासी तथा आसामी। हालांकि बाद में इसमें भी बदलाव किया गया। अधिनियम में यह भी प्रावधान किया गया कि जबतक कोई व्यक्ति खेती करने में अक्षम न हो, उसे अपनी जमीन को लगान पर उठाने का अधिकार नहीं होगा। यदि वह ऐसा करता है तो उसका अधिकार समाप्त हो जायेगा। सिर्फ उन्हीं व्यक्तियों को भूमि उठाने का अधिकार दिया गया, जो शारीरिक रूप से दुर्बलता से पीड़ित हैं, और स्वयं खेती नहीं कर सकते हैं।
- अधिनियम के अन्तगर्त यह भी प्रावधान किया गया कि भविष्य में कोई भी परिवार दान या विक्रय द्वारा ऐसी जोत नहीं प्राप्त करेगा, जो उसकी अपनी जोत मिलाकर उत्तर प्रदेश में कुल 12.5 एकड़ से अधिक हो। जिसके पास 12.5 एकड़ से अधिक भूमि है, वह उनके पास बनी रहेगी, परन्तु ऐसे लोग कोई और भूमि दान या विक्रय द्वारा प्राप्त नहीं कर सकेंगे।
- इस अधिनियम से पहले कुछ जोतदार अपनी वैयक्तिगत विधि द्वारा शासित होते थे और कुछ काश्तकारी अधिनियम की विधि द्वारा,

किन्तु इस अधिनियम ने न सिर्फ जमींदारी को समाप्त कर दिया, बल्कि धर्म को भी खत्म कर दिया। किसी जोतदार के मरने पर उसकी भूमि का उत्तराधिकार अधिनियम में दिये विधि से तय होगा न कि वैयक्तिक विधि से। अर्थात सभी धर्म के लोगों के लिए समान उत्तराधिकार की व्यवस्था की गई।

- इस अधिनियम ने राज्य सरकार द्वारा अर्जित भूमि को गाँवसभा में निहित कर दिया और भूमि के प्रबन्ध के लिए गाँवसभा में एक समिति की स्थापना की, जिसे भूमि प्रबन्धक समिति कहते है।
- सभी के निजी कुएँ, आबादी के वृक्ष एवं इमारतें तथा इमारतों से संलग्न भूमि उसी के पास रहने दी गई और यह समझा लिया गया कि राज्य सरकार ने उसके मालिकों के साथ कुओं, इमारतों आदि का बन्दोबस्त कर दिया है। चाहे जमींदार हो या काश्तकार, सभी लोग अपनी इमारतों और उससे संलग्न भूमियों, निजी कुओं एवं आबादी के पेड़ों के मालिक हो गये।
- अधिनियम में प्रावधान किया गया कि 3.8 एकड़ तक की जोतों का विभाजन नहीं हो सकता, यदि बंटवारे की भूमि 3.8 एकड़ से कम है तो न्यायालय इस भूमि के विक्रय की अनुमति देगा और प्राप्त विक्रय धनराशि का बंटवारा सभी के अधिकार के अनुसार किया जायेगा।

उत्तर प्रदेश का भूमि विवरण

क्रम	विषय	क्षेत्रफल
1	प्रतिवेदित क्षेत्रफल	24170 हजार हेक्टेयर
2	वन	1658 हजार हेक्टेयर
3	ऊसर एवं खेती के अयोग्य भूमि	464 हजार हेक्टेयर
4	खेती के अतिरिक्त अन्य उपयोग में आने वाली भूमि	1658 हजार हेक्टेयर
5	कृष्य बेकार भूमि	410 हजार हेक्टेयर
6	स्थायी चारागाह एवं अन्य चराई की भूमि	65 हजार हेक्टेयर

7	अन्य वृक्षों एवं झाड़ियों आदि की भूमि	325 हजार हेक्टेयर
8	वर्तमान परती	1135 हजार हेक्टेयर
9	अन्य परती	539 हजार हेक्टेयर
10	वास्तविक बोया गया क्षेत्रफल	16546000 हेक्टेयर
11	एक बार से अधिक बार बोया गया क्षेत्रफल	9350 हेक्टेयर

स्रोतः सांख्यिकी विभाग, लखनऊ, उत्तर प्रदेश

भूदान

जब जमीन का मसला न क्रांतिकारियों की हिंसा से हल हो रहा था और न ही सरकारी कानूनों से, विनोबा ने लोगों में सत्य की चाह को प्रेरित किया और इससे उत्पन्न प्रेम और करुणा को प्रवाहित कर ऐसी पहल की, जिससे भूदान आंदोलन शुरू हुआ जो बाद में ग्रामदान बन गया। दो-ढाई दशकों तक चले इस आंदोलन के दौरान कई राज्यों में भूदान और ग्रामदान पर कानून भी बने। गांधी जी चाहते थे कि स्वराज्य की समग्र रचना का केंद्र गांव हो, विनोबा जी इसी छोर को लेकर आगे बढ़े। भूमिहीनों के पक्ष में विनोबा जी ने देश में जिस तरह का अतुलनीय प्रयास किया, उसके बारे में किसी ने न सोचा था और न ही कोई उम्मीद किसी को थी। आजादी के पांच साल बाद जमीन के मसले पर देश के विभिन्न इलाकों में तनाव फैल रहा था, लेकिन इस मसले का भूदान जैसा कोई मानवीय हल निकल आएगा, ऐसी कोई प्रारंभिक परिकल्पना भी किसी के मन में नहीं थी। वे भूमिहीनों को जमीन दिलाने के लिए नक्सलियों की ओर से लगातार बढ़ाये जा रहे दबाव से चिंतित हुए। ऐसे में विनोबा जी गांधी जी के अहिंसा के रास्ते पर चल कर और सरकार से कोई मदद लिए बगैर लोक शक्ति को जगाकर आम लोगों के जीवन में बदलाव लाने को संकल्पबद्ध हो गए। बिनोवा जी को जमीन का पहला दान 18 अप्रैल, 1951 को आंध प्रदेश के तेलंगाना क्षेत्र में पोचमपल्ली ग्राम में मिला। इस जगह कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में सशस्त्र किसान विद्रोह का असर अभी भी महसूस किया जा रहा था। तीन महीनों से भी कम समय में उन्होंने इस क्षेत्र में दान के रूप में 12,000 एकड़ जमीन पाई। इसके बाद आन्दोलन उत्तर भारत में, विशेषकर बिहार और उत्तर प्रदेश में फैल गया। शुरू के वर्षों में आन्दोलन को काफी सफालता मिली। उसे मार्च, 1956 तक दान के रूप में 40 लाख एकड़ से अधिक जमीन मिली। वे निरंतर दो दशकों तक देश की किसी न किसी सड़क पर या गांव में चलते-फिरते भूदान की अपील करते रहे। वह केवल बड़े भूपतियों से ही जमीन नहीं मांगते थे, बल्कि वे हर एक व्यक्ति से अपनी जमीन का कम से कम छठा हिस्सा दान करने को कहते थे। उन्होंने पूरे देश में दलितों, गरीबों और

भूमिहीनों के लिए पांच करोड़ एकड़ जमीन हासिल करने का लक्ष्य रखा था, जो भारत में तीस करोड़ एकड़ जोतने लायक जमीन का छठा हिस्सा था। उनका यह लक्ष्य पूरा नहीं हुआ। जमीन तो आसानी से मिल जाती थी पर उसका भूमिहीनों के बीच वितरण बहुत मुश्किल था। बँटवारे के काम में सरकार के राजस्व विभाग की मदद की जरूरत थी, जो अपेक्षानुरूप नहीं मिली। 1955 तक आते-आते इस आंदोलन ने नया रूप धारण कर लिया। इसे ग्रामदान के रूप में जाना गया। इसका अर्थ था, सारी भूमि गोपाल की। ग्रामदान वाले गाँवों की सारी जमीन सामूहिक स्वामित्व की मानी गई। 1960 का अंत आते-आते देश में ग्रामदानों की कुल संख्या 4500 तक पहुंच गई थी।

इसके बाद आंदोलन का जोर खत्म होने लगा और दान के रूप में बहुत कम जमीने मिलीं। इसके अलावा दान की गई भूमि का एक बड़ा हिस्सा खेती लायक नहीं था या फिर मुकदमों में फंसा हुआ था। यही कारण था कि लगभग 45 लाख एकड़ भूदान भूमि में से केवल 6 लाख 54 हजार एकड़ ही 1957 के अंत तक 2 लाख परिवारों के बीच बांटी जा सकी, और फिर 1961 के आरंभ तक 8 लाख 72 हजार एकड़ जमीन बांटी गई। तमाम आशायें जगाने के बावजूद साठ के दशक तक भूदान/ग्रामदान का जोर समाप्त हो गया और इसकी रचनात्मक क्षमताओं का आमतौर पर उपयोग नहीं किया जा सका। इसका एक कारण यह भी था कि सरकार के अधिकारियों और कर्मचारियों की नीयत भी भूमिहीनों की तकदीर बदलने में नहीं थी, शायद यही कारण रहा कि सरकारें भी बाद में भूदान के काम को पूरा करने के लिए सक्रिय नहीं हुई। सरकार पूरे मन से मददगार बन कर भूदान के साथ खड़ी होती तो कुल मिली जमीन का वितरण सुनिश्चित हो गया होता। जब से अपने देश में नवउदारवादी आर्थिक नीति लागू हुई है, तबसे भारतीय राजव्यवस्था के दायरे से भूमि या भूमि सुधार का मुद्दा गायब हो गया है, जमीन का मुद्दा राजनीतिक दलों की प्राथमिकता सूची में भी नहीं रह गया है। भूदान की जमीन जिन भूमिहनों को मिली भी, उनमें से कुछ ही लोगों का कब्जा बरकरार रह पाया। तकरीबन चालीस फीसद भूदान किसान ऐसे हैं, जिन्हें जमीन पर कब्जा मिला ही नहीं और जिन्हें मिला भी, उन्हें कुछ समय बाद दबंगों ने बेदखल कर दिया। इस कारगुजारी में सरकार की भूमिका दबंगों/जमींदारों के पक्ष में दिखी। सरकार भूदान की जमीन को भूमिहीनों के बीच बांटने की इच्छुक नहीं दिख रही है, जबकि उत्तर प्रदेश में लगभग 4 लाख 21 हजार एकड़ जमीन भूदान में मिली।

उपरोक्त के सन्दर्भ में भूदान की भूमि के नियमन और भूमिहीन लोगों के साथ बन्दोबस्त करने के लिए उत्तर प्रदेश भू-दान यज्ञ अधिनियम, 1952 बनाया

गया। जिसकी धारा-8 और धारा-14 के अधीन किया गया या समझा गया भूमि का अनुदान किसी विधि में किसी विपरीत होते हुए भी पंजीकरण व दस्तावेजों के निष्पादन में स्टाम्प शुल्क की अदायगी, पंजीकरण अथवा साक्षीकरण से मुक्त रहेगा। इसके बावजूद भी उत्तर प्रदेश में भूदान में प्राप्त जमीनों का वितरण सुनिश्चित नहीं कराया जा सका, जिन जगहों पर वितरण हुआ भी, वहाँ दबंगों द्वारा पुनः जमीन हथिया ली गई।

(भूदान के अंतर्गत प्राप्त व आवंटित भूमि का विवरण परिशिष्ट-1 में दिया गया है।)

भूमि अधिकार में महिलाओं की स्थिति और उत्तराधिकार

ब्रिटिश सरकार की कानूनी व्यवस्था लागू होने से पूर्व शास्त्रसम्मत मान्यताओं से स्थानीय रीति-रिवाज और स्थानीय रीति-रिवाज से शास्त्रीय मान्यतायें प्रभावित होती रहीं थीं। हालांकि परंपरागत समाज में शास्त्रीय नियमों की पकड़ ऊँची जातियों में अधिक थी। बहरहाल ब्रिटिश कानून और न्याय व्यवस्था के आ जाने से स्थानीय रीति-रिवाजों एवं स्थानीय पंचायतों का कानून और न्याय प्रक्रिया में दखल एक ओर से समाप्त सा हो गया। उन्नीसवीं सदी में अंग्रेज सरकार ने सती उन्मूलन (1829), विधवा पुनर्विवाह (1856), बालिका हत्या पर पाबंदी (1870) जैसे कानून पारित किये, लेकिन हिन्दुओं के उत्तराधिकार तथा विवाह संबन्धी कानूनों को छुआ तक नहीं।

बीसवीं सदी के प्रारंभिक वर्षों में कई स्थानीय और राष्ट्रीय महिला संगठनों का प्रादुर्भाव हुआ, इन संगठनों ने सामाजिक सुधारों का एक के बाद एक अभियान चलाया। 1929 में बाल विवाह पर रोक लगाने वाले कानून को पास करवाने के बाद ये संगठन तलाक, उत्तराधिकार तथा संपत्ति के अधिकार के मामले उठाने लगे। 1934 में आल इंडिया वीमेन्स कान्फ्रेंस ने हिंदू कोड का प्रस्ताव किया। 1937 में हिन्दू वीमेन्स राईट टू प्रॉपर्टी कानून पास हुआ। 1934 से 1951 तक हिंदू कोड पर बहस चलती रही, और फिर 1955 में हिंदू विवाह कानून, 1956 में हिंदू उत्तराधिकार कानून बना। हिन्दू कानूनों की भांति अंग्रेजो ने मुसलिम कानून को भी सूचीबद्ध करने की कोशिश की। अंग्रेजी न्यायालयों में हिंदू-मुसलमान दोनों के विवादों के फैसले स्थानीय परंपरा के आधार पर हाने लगे। इस प्रकार मुसलमान कुछ मामलों में तो स्थानीय रीति-रिवाजों, परंपरा का अनुसरण करते थे तथा कुछ मामलों में इस्लामी कानूनों का। इस चुनाव में वर्गहित और पितृसत्ता का हित अहम भूमिका निभाते थे। 1937 का शरियत एप्लिकेशन कानून इस विधि के दोहरेपन को समाप्त करने के लिए बनाया गया। इसके पश्चात् सभी मुस्लिम महिलायें निजी

कानून के दायरे में आ गईं। इस विधेयक में मुसलमान स्त्री को उत्तराधिकार का अधिकार दिया गया, जिसका जमीदारों ने विरोध किया।

उत्तर प्रदेश जमींदारी विनाश एवं भूमि व्यवस्था अधिनियम के पूर्व भूमि विधि में उत्तराधिकार को शासित करने वाली दो विधियाँ प्रचलित थीं। पहली वैयक्तिक विधि और दूसरी संयुक्त प्रान्त काश्तकारी अधिनियम, 1939 में दी गई उत्तराधिकार विधि। वैयक्तिक विधि का आशय ऐसी विधि से है जो किसी भी व्यक्ति पर उसके किसी धर्म या सम्प्रदाय विशेष का सदस्य होने के नाते लागू होता है। यह वैयक्तिक विधि जोतदारों के पांच वर्गो पर लागू होती थी जो काश्तकार हिन्दू होते थे उन पर हिन्दू विधि, मुस्लिम हों तो मुस्लिम विधि आदि। इसके अतिरिक्त जो जोतदार थे, उनका उत्तराधिकार 1939 के काश्तकारी अधिनियम से शासित होता था। या फिर निम्न काश्तकारों पर भी उनकी वैयक्तिगत विधियाँ लागू नहीं होती थी। जैसे मौरूसी काश्तकार, गैर-दखीलकार काश्तकार आदि। लेकिन उत्तर प्रदेश जमींदारी विनाश एवं भूमि व्यवस्था, 1950 लागू होने के बाद उत्तर प्रदेश में निवास करने वाले सभी सम्प्रदाय-धर्म के जोतदारों पर इसी अधि ानियम की उत्तराधिकार विधि समान रूप से लागू होती है। किन्तु भूमि के अलावा अन्य चल-अचल सम्पात्तियों के विभाजन के उत्तराधिकार हेतु वैयक्तिक विधि ही लागू होती है। उत्तर प्रदेश जमींदारी विनाश एवं भूमि व्यवस्था अधिनियम ने भूमि विधि से धर्म को उन्मूलित कर दिया, जो कि प्रशंसनीय कार्य रहा, किन्तु लिंग के आधार पर भेदभाव बनाये रखना कहीं से भी उचित नहीं ठहराया जा सकता

है। इस अधिनियम के अन्तर्गत यदि मृतक पुरूष है तो उसका उत्तराधिकार एक धारा में दिये विधि से शासित होगा और यदि वह स्त्री है तो अन्य धारा में दिये उत्तराधिकार की विधि से। उत्तराधिकार का सामान्य क्रम एक ही रखा गया, चाहे वह जोतदार भूमिधर हो या आसामी। उत्तर प्रदेश जमींदारी विनाश एवं भूमि व्यवस्था अधिनियम की धारा-171 के अनुसार जब जोतदार पुरूष हो तो, उत्तराधिकार के क्रम में वर्ष 2001 में संसोधन के आधार पर, जहाँ अभी तक 19 प्रकार के उत्तराधिकारी शामिल थे, उत्तराधिकारियों में कई प्रकार की भ्रान्तियाँ पैदा होने के कारण धारा-171 में संसोधन करते हुए उत्तराधिकारियों की संख्या 15 कर दी गई। उत्तराधिकारियों के क्रम में माता-पिता, पितामह-पितामही को एक साथ रखते हुए उत्तर प्रदेश जमींदारी विनाश एवं भूमि व्यवस्था (संशोधन) अधिनियम, 2004 द्वारा लागू किया गया। यहाँ पुरूष वंशज का तात्पर्य पुरुष सन्ताने हैं, अर्थात वे सभी उत्तराधिकारी जो पुरूष वंश के सीधे क्रम में आते हैं और इनमें कोई स्त्री बीच में नहीं आती है। किन्तु जब जोतदार स्त्री हो और पुरूष से उत्तराधिकार प्राप्त हुआ हो तो, अर्थात धारा 172 (1) के अनुसार पुरुष से उत्तराधिकार में प्राप्त करने वाली कोई स्त्री भू-सम्पदा की पूर्ण स्वामी हो ही नहीं सकती। यहाँ उसका स्वामित्व होगा, अर्थात उसके मरने पर उसी भू-सम्पदा उसके उत्तराधिकारी (पुत्र आदि) को नहीं जायेगी, बल्कि अन्तिम पुरूष-स्वामी के उत्तराधिकारी को जायेगी। किन्तु जब ऐसी स्त्री जोतदार हो, जिसे भू-सम्पदा पुरुष जोतदार से उत्तराधिकार में न मिली हो तो उसका उत्तराधिकार धारा- 174 से निर्धारित होता है।

उत्तर प्रदेश जमींदारी विनाश एवं भूमि व्यवस्था अधिनियम लागू होने के ठीक पहले जमींदारी प्रथा में और श्रेष्ठतर किस्म की जोतदारी में वैयक्तिक विधि लागू होती थी। परिणामस्वरूप हिन्दू स्त्री भू-सम्पदा में सीमित स्वामिनी होती थी और मुस्लिम स्त्री उसकी पूर्ण स्वामिनी। किन्तु इस अधिनियम ने मुस्लिम महिला को भी उसी कोटि में ला कर रख दिया और अधिनियम के अंतर्गत मुस्लिम महिला का मालिकाना हक भी सीमति हो गया। यहाँ यह जानना जरूरी है कि जब 1956 ई० में संसद द्वारा हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 पारित किया गया, तो हिन्दू महिलाओं को उत्तराधिकारियों को सीमित स्वत्व को समाप्त करके उन्हें पूर्ण स्वामित्व में बदल दिया। अब हिन्दू महिला अपने कब्जे में रखने वाली किसी सम्पदा को चाहे वह हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 के लागू होने के पूर्व अर्जित हुआ हो या उसके बाद, वह पूर्ण स्वामिनी हो गई। किन्तु हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम के प्रावधान भूमि विधि के क्षेत्र में लागू नहीं होते हैं। जब महिलाओं के सीमित स्वत्व को हिन्दू विधि में सामाप्त कर दिया गया तो इस अनुपयोगी और

निराधार सीमित स्वत्व को भूमि विधि में रखने का क्या औचित्य है। इसका समाज के विकास में बाधा पहुंचाने व महिलाओं की वंचना के अलावा क्या अर्थ है। इस प्रकार भूमि विधि से भी सीमित स्वत्व को पूर्णतः समाप्त कर दिया जाना चाहिए। अधिनियम में दी गई विधि के अनुसार जोतदार की मृत्यु पर उसकी भू-सम्पदा उसके पुत्र को प्राप्त होगी, पुत्र के रहते पुत्रियों को भूमि में हिस्सा नहीं मिलेगा, यह विधि न तो हिन्दू विधि से मिलती है और न ही मुस्लिम विधि से, क्योंकि इन दोनो विधियों में पुत्र के साथ-साथ पुत्री भी हिस्सेदार होती है।

हालाँकि कृषि भूमि के उत्तराधिकार के संबंध में प्रदेश में प्रचलित इस विधि में लगातार संशोधन होते रहे हैं। इस विधि में पहले प्रथम श्रेणी के उत्तराधिकारियों में अविवाहित पुत्री सम्मिलित नहीं थी। लेकिन 2008 में किए गए संशोधन से उसे प्रथम श्रेणी के उत्तराधिकारियों में सम्मिलित कर लिया गया, जो 1 सितंबर 2008 से प्रभावी हुआ। लेकिन इसमें विवाहित पुत्रियों को उत्तराधिकार में सम्मिलित नहीं किया गया। अर्थात विवाहित पुत्री को कृषि भूमि में प्रथम श्रेणी का उत्तराधिकार प्राप्त नहीं है। लेकिन अविवाहित रहते हुए एक बार पुत्री को किन्हीं परिस्थितियों में यह अधिकार प्राप्त हो जाए तो उस का विवाह हो जाने से यह समाप्त नहीं होता और विवाह के उपरान्त भी बना रहता है, यानि कि उसे बेदखल नहीं किया जा सकता। लेकिन इसके बावजूद भी यह प्रश्न बना हुआ है कि जैसे ही पुत्री विवाह करेगी, वैसे ही उत्तराधिकार में प्राप्त सम्पदा में उसका अधिकार समाप्त हो जायेगा। गोया अविवाहिता पुत्री द्वारा विवाह किया जाना कोई अनैतिक कार्य हो। इसलिए इस विधि में संसोधन होना चाहिए और अविवाहिता के साथ-साथ विवाहिता स्त्री को भी प्रथम श्रेणी का उत्तराधिकार मिलना चाहिए। 11 फरवरी, 2016 को उत्तर प्रदेश में नई राजस्व संहिता लागू हुई है, उसमें भी अविवाहिता पुत्री को प्रथम श्रेणी का उत्तराधिकार दिया गया है, लेकिन विवाहिता पुत्री को यह अधिकार नहीं दिया गया है। यहाँ इसका अर्थ यह है कि पुत्री यदि विवाह कर लेगी तो भू-सम्पदा से वंचित हो जायेगी। इस प्रकार साफ तौर पर देखा जा सकता है कि पितृसत्तात्मक व्यवस्था को बनाये रखने के लिए किस तरह के उपाय किये गये हैं।

इसी कारण से प्रदेश की कृषि भूमि में महिलाओं का मालिकाना हक नाममात्र का है। 14 फरवरी, 1995 कों उत्तर प्रदेश सरकार ने महिला और पुरुष के नाम सामूहिक पट्टों को लेकर एक शासनादेश जारी जरूर किया था, परन्तु वह केवल पट्टों तक ही सीमित था। इसी के साथ ही मत्स्य पालन एवं कुम्हारी कला हेतु ताल-पोखरों के भूखण्डों का पट्टा पति-पत्नी के संयुक्त नाम से दिये जाने का भी एक शासनादेश 12 दिसम्बर 1995 को ज़ारी किया गया, किन्तु यह भी बहुत प्रभावकारी साबित नहीं हुआ। महिलाओं का भूमि पर मालिकाना हक़ अगर कहीं

दिखाई देता है, तो केवल बड़े किसान, जमींदार, सांमत अथवा पूंजीपति परिवारों की महिलाओं के नाम दर्ज आंकड़ों में ही मिलता है, वह भी या तो सीलिंग आदि के विवाद से बचने के लिये या विधवाओं के नाम पर और या फिर अपवादस्वरूप कहीं-कहीं सम्पत्ति में हुये बंटवारे के कारण, अन्यथा जमीन में महिलाओं का अधिकार लगभग न के बराबर है। प्रदेश में पंजीकरण शुल्क में (रजिस्ट्री/बैनामा में) महिलाओं को एक प्रतिशत की छूट मिली हुई है। इस सन्दर्भ में उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा वर्ष 2000 में एक शासनादेश द्वारा संपत्ति का बैनामा कराने पर महिलाओं को स्टाम्प शुल्क में दो फीसदी की छूट दी गई, किन्तु वर्ष 2008 में इस छूट को घटाकर 1 प्रतिशत कर दिया गया। हलांकि इसे बढ़ाकर फिर 2 प्रतिशत किया जाना चाहिए। लेकिन इसके बावजूद, इस वजह से ही सही सम्पत्ति के बैनामे महिलाओं के नाम भी होने लगे। इससे पहले महिलाओं को सम्पत्ति की खरीद-फरोख्त से दूर ही रखा जाता था। क्योंकि सम्पत्ति का वैधानिक अधिकार पुरुषों को ही प्राप्त था। स्टाम्प शुल्क में छूट के नाम पर ही सही सम्पत्ति का स्वामित्व अब महिलाओं को भी मिलने लगा है, परिवार में क्रय की जाने वाली सम्पत्ति में भी वैधानिक स्वामित्व महिलाओं को प्राप्त होने लगा है। महिलाओं को दी जाने वाली स्टाम्प छूट से महिलाओं में आत्मविश्वास भी बढ़ा है और सम्पत्ति में महिलाओं को स्वामित्व मिलने से सामाजिक रूप से महिलाओं का आत्म सम्मान पहले की अपेक्षा अधिक हुआ है। यही कारण है कि क्रेताओं में महिलाओं की संख्या प्रत्येक वर्ष बढ़ती जा रही है। हालाँकि इसके बावजूद भी महिलायें वास्तविक हकदार नहीं हैं। आज बड़ी संख्या में महिलायें खेती-किसानी कर रही हैं। अभी महिलाओं का कृषि कार्य में योगदान तीन चौथाई के आसपास होता है, इस पर भी उनके आर्थिक योगदान की गणना को कौन कहे, उन्हे किसान नहीं माना जाता है क्योंकि उनके पास खतौनी (कृषि दस्तावेज) नहीं है अर्थात वह खेत की वास्तविक मालकिन नहीं है। अब इस दौर में जब हर तरफ महिला सशक्तिकरण की बातें हो रहीं हैं, तो बातों से आगे बढ़कर कुछ ठोस किये जाने की आवश्यकता है। कृषि भूमि सहित विभिन्न प्राकृतिक संसाधन महिलाओं के पक्ष में हस्तांरित होने चाहिए। सरकार को ऐसी नीति बनानी चाहिए, जिससे ये असमानता दूर हो सके और प्राकृतिक संसाधन सिर्फ पुरूषों के हाथ में न रहें।

दरअसल सामाजिक ढाँचे में परिवर्तन के फलस्वरूप भी महिलाओं की स्थितियों में बहुत परिवर्तन नहीं आया है। संविधान में भले ही सभी नागरिकों को बराबर के अधिकार दिये गये हों, परन्तु आजादी के 70 वर्ष बाद भी महिलायें भूमि अधिकार से वंचित हैं। आर्थिक व सामाजिक जनगणना 2011 के अनुसार उत्तर प्रदेश में सिर्फ 6.95 प्रतिशत महिलाओं के पास ही जमीन है, यह जमीन प्रदेश की

कुल जोत भूमि का मात्र 5.38 प्रतिशत ही है। प्रदेश सरकार के द्वारा अब तक जो भी भूमि वितरित की गयी हैं, उनमें से अधिकांश पुरूषों के नाम की गई है, जिस कारण महिलायें भूमि के मालिकाना हक से वंचित हैं। इसके साथ-साथ महिलाओं को भूमि पर हक न मिलने की वजह से भूमि से उत्पादन पर नियंत्रण तथा उससे जुड़ी सरकारी मदद का फायदा भी महिलाओं को नहीं मिल पाया। जाहिर है जब महिलाओं के पास भूमि का नियंत्रण नहीं है, तो उनके परिवार एवं समाज में जो उनका विकास होना चाहिये, उनका उस पर भी नियंत्रण नहीं होगा। खेत में क्या बोया जायेगा, खाद्य सुरक्षा कैसे होगी, अनाज के सम्बन्ध में नियंत्रण करना व र्निणय लेने में उन्हें कभी भी सक्षम नहीं होने दिया गया।

विगत वर्षों में हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम में संशोधन कर लड़कियों को पैतृक सम्पत्ति में बराबर की हकदारी दी गई। परन्तु भूमि व्यवस्था के उत्तराधिकार में विवाहित महिलाओं के लिये यह व्यवस्था लागू नहीं है। सामान्यतः महिलाओं को भूमि हकदारी से दूर ही रखा जाता है। हलांकि अब नई व्यवस्था में ग्रामपंचायत (भूमि प्रबन्धक समिति) द्वारा पट्टों के आवंटन में महिलाओं को वरीयता देने का प्रावधान कर दिया गया है, किन्तु पट्टों के आवंटन की अपनी सीमाये हैं। इसलिए हमारी पैरोकारी है कि महिलाओं को अपने परिवार की भूमि में हिस्सा तो मिले ही, इसके अलावा ग्राम समाज की भूमि में भी उन्हें हिस्सेदार बनाया जाये। ग्रामसभा की सार्वजनिक मद की जमीनों पर भी महिलाओं का नियंत्रण होना चाहिए। चाहे वह गांव के तालाब अथवा जलाशय हों या चारागाह और खलिहान की जमीने, सभी पर महिलाओं का नियंत्रण होना चाहिए। पितृसत्तात्मक व्यवस्था को चुनौती देने और महिलाओं के सम्मान, पहचान और भागीदारी के लिये जमीन पर उनकी बराबरी का हक आवश्यक है। उनकी मुक्ति राजनैतिक हिस्सेदारी या उससे भी पहले सामाजिक न्याय का प्रश्न है।

दलित समुदाय की भूमिहीनता और जमीन का सवाल

दलितों के लिए जमीन का सवाल उनके सम्मान व पहचान के साथ ही जिन्दगी का सवाल है। अगर उत्तर प्रदेश में दलितों/वंचितों और खासकर उनमें भूमिहीनों की स्थिति को देखा जाये, तो इनके उत्थान के लिए तमाम योजनायें और कानून बनने के बाद भी कोई खास परिवर्तन नहीं आया है। सर्वाधिक जनसंख्या वाले प्रदेश में कुल जनसंख्या का 21.5 प्रतिशत दलित (अनुसूचित जाति) आबादी है और इस कृषि आधारित प्रदेश में कुल दलित आबादी का लगभग 87 प्रतिशत ग्रामीण आबादी है। सरकारी आँकड़ों के मुताबिक उत्तर प्रदेश के कुल कर्मकारों में 66 प्रतिशत सीधे तौर पर कृषि पर निर्भर हैं। साथ ही अधिकांश दलित आबादी ग्रामीण है और परम्परागत तौर पर कृषि या अन्य संबंधित गतिविधियों पर ही आश्रित है। हांलाकि उत्तर प्रदेश में सामाजिक समूहवार भूमिधरी से सम्बन्धित आँकड़े उपलब्ध नहीं है, पर यह तथ्य सर्वविदित है कि लगातार हाशिये पर धकेले जा रहे दलित ही सबसे ज्यादा शोषण और उत्पीड़न का शिकार हैं।

सामाजिक संदर्भों में जमीन केवल आर्थिक गतिविधियों का साधन मात्र नहीं है, बल्कि यह सामाजिक सम्मान और पहचान का भी सूचक है। दलित परिवारों की सामाजिक और आर्थिक स्थिति में बेहतरी के लिये जमीन का मालिकाना हक/भूमिधरी होना बहुत महत्त्वपूर्ण है। लेकिन स्थिति यह है कि दलितों के पास या तो जमीने ही नहीं है, और लगभग आधे मामलों में जमीन है भी तो उपजाऊ नहीं है। आजादी के बाद 1950 में बने जमींदारी विनाश एवं भूमि व्यवस्था अधिनियम के बाद भी दलितों की स्थितियों में बहुत बदलाव नहीं आया, इस वर्ग की इतने लम्बे समय की वंचना को इस महत्वपूर्ण कानून के द्वारा भी दूर नही किया जा सका है। इसलिए दलित समुदाय में भूमि अधिकार का सवाल सबसे महत्वपूर्ण दिखता है। क्योंकि हमारे प्रदेश में दलितों एवं वंचितों की आबादी भूमि पर पूर्णतया आश्रित होने के साथ-साथ भूमि को ही अपना सम्मान मानती है और भूमि ही उनकी

आजीविका का प्रमुख स्त्रोत हैं। ऐसे बहुत लोग हैं, जो भूमिहीनता भुगत रहे हैं। वे न कोई वाद लड़ सकते हैं, और न ही किसी की जमानत ले सकते हैं। जमीनों से सम्बन्धित कई मामले वर्षों से न्यायालयों में लटके पड़े हैं, जिनका कोई पुरसा हाल नहीं है। प्रदेश के कई हिस्सों में दलित समुदाय के लोग बताते हैं कि हमारा हाल यह है कि मरने के बाद दफनाने की भी जगह नहीं है। भूमिहीनता की स्थिति, विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में कितनी तरह से पीड़ा पहुंचाती है, इसे दलित समुदाय के लोग ही जानते हैं। ग्रामीण समाज में जिनके पास कोई जमीन नहीं है, उनका कोई वजूद नहीं है। दरअसल ग्रामीण क्षेत्रों की अपनी अलग सत्ता संरचना होती है, जहाँ ऊँच-नीच, भेदभाव, शोषण, अत्याचार, उत्पीड़न, जोर-जबरदस्ती और दबंगई आज भी जिन्दा है। सामाजिक और आर्थिक दहशतगर्दी आज भी दलितों को रौंदे हुए है। दलित महिलाओं की इज्जत-आबरू आज भी ऊँची और दबंग जातियों की गिरफ्त में है, ऐसे में उनके समूचे वजूद की कोई पहचान या निशानी रह जाती है, तो वह जमीन है।

अधिकांश दलित महिलायें खेतों में मजदूरी का काम करती हैं। जमीन का मालिकाना हक और जमीन न होने की दशा में उनका क्या हाल होगा, इसकी सिर्फ कल्पना की जा सकती है। जिस समुदाय को शौच के लिए भी दूसरों की जमीन में जाने की विवशता हो, उन पर कितने तरह के जुल्म और अत्याचार होते होंगे, क्या इनका हिसाब लगाया जा सकता है? जमींदारी विनाश अधिनियम बनने के इतने दिनों के बाद भी हजारों एकड़ जमीन का कुछ अता-पता नहीं है। भूमि

सुधार अधिनियम में भूमि स्वामित्व की इतनी ऊँची सीमा के बाद भी तरह-तरह से भूमि कब्जाने का षड़यंत्र जारी है।

पिछले दिनों 4 अगस्त, 2015 को उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा निणर्य लिया गया कि अनुसूचित जाति की भूमि को कोई भी गैर अनुसूचित जाति का सदस्य खरीद सकता है। जबकि अभी तक उ०प्र० जमींदारी विनाश एवं भूमि व्यवस्था अधिनियम, 1950 की धारा-157-क के अंतर्गत अनसूचित जाति के भूमिधर को कलेक्टर की पूर्व स्वीकृति के बिना अनुसूचित जाति के सदस्य के अलावा अन्य व्यक्ति को किसी भूमि के विक्रय, दान, बंधक अथवा पट्टा द्वारा अंतरण करने का अधिकार नही है। इस सम्बन्ध में प्रतिबन्ध यह है कि ऐसी कोई स्वीकृति कलेक्टर द्वारा उस दशा में नहीं दी जाएगी, जहां इस धारा के अन्तर्गत प्रार्थना पत्र देने की तारीख पर उत्तर प्रदेश में धारित भूमि 1.26 हेक्टेयर से कम है अथवा जहां संक्रामण करने वाले द्वारा उत्तर प्रदेश में इस प्रकार धारित भूमि कथित तारीख पर ऐसा अन्तरण करने के पश्चात् 1.26 हेक्टेयर से कम हो जानी सम्भाव्य हो।

किन्तु सरकार द्वारा इस तरह के प्रावधान को मामूली शर्तो के साथ खत्म कर दिया गया है। सरकार के इस निणर्य का दलित समुदाय के ऊपर क्या प्रभाव होगा, इसे समझने के लिए यह जानना जरूरी है कि उ०प्र० जमींदारी विनाश एवं भूमि व्यवस्था अधिनियम, 1950 में दलितों की सुरक्षा में कई महत्वपूर्ण प्रावधान होने के बावजूद भी आज तक आधे से अधिक दलित आबादी अपने जमीनों पर काबिज/दाखिल होने के लिए रोज जद्दोजहद कर रही हैं और दबंगों द्वारा हिंसा का शिकार हो रही हैं। उनकी जमीनों पर उन्हें कब्जा दिलाने में अब तक सरकारें भी असफल रहीं हैं। इन सबके बावजूद भी पूरे देश में देखा जाये तो सिर्फ उत्तर प्रदेश में ही दलित जति के पास कुछ जमीने हैं। किन्तु इसके बाद भी दलित जाति के लोग ही सबसे ज्यादा भूमिहीन हैं। दलित समाज की एक बड़ी आबादी ऐसी है जिसके पास आवास बनाने के लिए भी जमीन नहीं है, और आजादी के 70 साल बीत जाने के बाद भी सरकारें इन्हें आवास बनाने के लिए अब तक जमीन नहीं दे पाई है। इस प्रकार सामाजिक स्थिति को देखते हुए इन कानूनों से पुनः दलितों समुदाय के भूमिहीन हो जाने की पूरी संभावना है। हलांकि सामाजिक संगठनों के विरोध के चलते सरकार का यह प्रयास सफल नहीं हुआ, किन्तु नई राजस्व संहिता में पुराने कानून को कुछ कमजोर जरूर कर दिया गया है।

उत्तर प्रदेश में सीलिंग की अतिरिक्त भूमि, ग्राम समाज तथा भूदान की इतनी भूमि उपलब्ध रही है कि उससे न केवल दलित बल्कि अन्य जातियों के भूमिहीनों को भी गुजारे लायक भूमि मिल सकती है, किन्तु किसी भी सरकार द्वारा उसका आवंटन नहीं किया गया, इतना ही नहीं जो आवंटन किया भी गया

या जो भूमि पूर्व में आवंटित थी उसके कब्जे दिलाने के लिए भी कोई गंभीर कार्रवाही नहीं की गई। 2001 की जनगणना से यह एक बात उभर कर आई थी कि 1991–2001 के दशक में उत्तर प्रदेश के 23 प्रतिशत दलित भूमिधारक से भूमिहीन की श्रेणी में आ गये। यहाँ तक की 2002 में उत्तर प्रदेश जमींदारी विनाश एवं भूमि व्यवस्था अधिनियम, 1950 की धारा–122 (ग) की उपधारा 3 में संशोधन करके पट्टे के रूप में भूमि आवंटन की वरीयताक्रम को ही बदल दिया गया और दलितों को अन्य भूमिहीन वर्गों के साथ जोड़ दिया। इस दौरान भूमि आवंटन तो हुआ किन्तु जमीन दलितों को न दे कर अन्य जातियों को दे दी गयी। हलांकि बाद में फिर 2007 में पट्टों के आवंटन में पुनः वरीयताक्रम में दलितों की बहाली की गई, किन्तु अब एक बार फिर 11 फरवरी, 2016 को लागू राजस्व संहिता में (जो अब धारा–126 है) पट्टों के आवंटन में दलितों को प्राप्त वरीयता को खत्म करते हुए उन्हें अन्य वर्गों के भूमिहीनों के साथ जोड़ दिया गया है। इस प्रकार अब दलित समुदाय को मिलने वाले पट्टे की संभावना क्षीण हुई है, जो कि निराशाजनक है।

आर्थिक व सामाजिक जनगणना 2011 के अनुसार उत्तर प्रदेश की आबादी का एक बड़ा हिस्सा, लगभग 44 प्रतिशत परिवार कृषि भूमिहीन हैं और इन भूमिहीन परिवारों में अधिकांश दलित व वंचित समुदाय के परिवार हैं। इतने भूमि सुधार कानूनों के बनने और लागू होने के बाद भी दलितों के पास प्रदेश की कुल जोत भूमि का मात्र 9 प्रतिशत ही है, जबकि प्रदेश में उनकी जनसंख्या लगभग 21 प्रतिशत है। इसी तरह सीलिंग एक्ट के अंतर्गत सरकार द्वारा 3,69,362 एकड़ कृषि योग्य भूमि सीलिंग सरप्लस घोषित की गयी, जिसमें से लगभग 2,63,225 एकड़ भूमि, भूमिहीन परिवारों में वितरित की गयी, लेकिन यह भूमि प्रदेश की कुल जोत भूमि का मात्र 0.58 प्रतिशत ही है। वहीं दूसरी तरफ प्रदेश में जो भी भूमि सरकार के द्वारा भूमिहीन व दलित परिवारों को पट्टा दी गयी, अधिकांश मामलो में भूमिहीनों का कब्जा नही हो पाया है, या ये जमीनें कई कारणों से न्यायलयों में लंबित हैं, जिनका भूमिहीन लाभ नहीं ले पा रहे हैं।

(उत्तर प्रदेश में दलित समुदाय के भूमिहीन परिवारों का जिलावार विवरण परिशिष्ट–2 में दिया गया है।)

आदिवासियों की स्थिति

साल 2011 की जनगणना के अनुसार उत्तर प्रदेश में 11 लाख, 34 हजार, 273 आदिवासी रहते हैं। जिसमें भोतिया, बुक्सा, जन्नसारी, राजी, थारू, गोंड, धुरिया, नायक, ओझा, पाथरी, राज, गोंड, खरवार, खैरवार, सहारिया, परहइया, बैगा, पंखा, अगारिया, पतारी, चेरो, भुइया और भुइन्या जैसे आदिवासी निवास करते हैं। सोनभद्र, मिर्जापुर, सिद्धार्थनगर, बस्ती, महाराजगंज, गोरखपुर, देवरिया, मऊ, आजमगढ़, जौनपुर, बलिया, गाजीपुर, वाराणसी और ललितपुर ऐसे जिले हैं जहाँ पर आदिवासी रहते हैं। इसके अलावा नेपाल से सटे उत्तर प्रदेश के तराई क्षेत्र लखीमपुर खीरी, सिद्धार्थनगर, गोरखपुर और महराजगंज जिले में थारू जनजाति के लोग भी रहते हैं। लेकिन उत्तर प्रदेश के 14 जिलों में निवास करने वाले आदिवासियों को लेकर कहीं कोई सवाल नहीं है।

सामाजिक-आर्थिक एवं जाति जनगणना के आंकड़ों के विश्लेषण से स्पष्ट है, ग्रामीण क्षेत्र के दलितों एवं आदिवासियों के लिए भूमि का प्रश्न सब से महत्वपूर्ण प्रश्न है, जिसे भूमि सुधारों को सही ढंग से लागू किये बिना हल करना संभव नहीं है, परन्तु यह बहुत बड़ी बिडम्बना है कि भूमि सुधार और भूमि वितरण किसी भी दलित अथवा गैर दलित पार्टी के एजंडे पर नहीं है, अतः दलितों एवं आदिवासियों का तब तक सशक्तिकरण संभव नहीं है, जब तक उन्हें भूमि वितरण द्वारा भूमि उपलब्ध नहीं करायी जाती है। ऐसा नहीं है कि उत्तर प्रदेश में आवंटन के लिए भूमि उपलब्ध नहीं है, 1995 में उत्तर प्रदेश में सीलिंग की अतिरिक्त भूमि, ग्राम समाज तथा भूदान की इतनी भूमि उपलब्ध थी कि उससे न केवल दलितों और आदिवासियों को, बल्कि अन्य जातियों के भूमिहीनों को भी गुजारे लायक भूमि मिल सकती थी परन्तु सरकार द्वारा उसका आवंटन नहीं किया। इतना ही नहीं जो आवंटन किया भी गया या जो भूमि पूर्व में आवंटित थी, उसके कब्जे दिलाने के लिए भी कोई कार्रवाही नहीं की गई। आदिवासियों के सशक्तिकरण हेतु वनाधिकार कानून-2006 तथा नियमावली-2008 में लागू हुयी थी, इस कानून के अंतर्गत सुरक्षित जंगल क्षेत्र में रहने वाले आदिवासियों तथा गैर-आदिवासियों

को उनके कब्जे की आवासीय तथा कृषि भूमि का पट्टा दिया जाना था और इस सम्बन्ध में आदिवासियों द्वारा अपने दावे प्रस्तुत किये जाने थे, उस समय भी उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा इस दिशा में कोई भी प्रभावी कार्रवाही नहीं की गई, जिस का नतीजा यह हुआ कि 30-1-2012 को उत्तर प्रदेश में आदिवासियों द्वारा प्रस्तुत कुल 92,406 दावों में से 74,701 दावे अर्थात 81 प्रतिशत दावे रद्द कर दिए गए और केवल 17,705 अर्थात केवल 19 प्रतिशत दावे स्वीकार किये गए तथा कुल 1,39,777 एकड़ भूमि आवंटित की गयी। उत्तर प्रदेश सरकार की आदिवासियों को भूमि आवंटन में लापरवाही और दलित/आदिवासी विरोधी मानसिकता को देख कर आल इंडिया पीपुल्स फ्रंट ने इलाहाबाद उच्च न्यायालय में जनहित याचिका दाखिल की थी जिस पर उच्च न्यायालय ने अगस्त, 2013 में राज्य सरकार को वनाधिकार कानून के अंतर्गत दावों को पुनः सुन कर तेजी से निस्तारित करने के आदेश दिए थे। परन्तु उस पर भी कोई ध्यान नहीं दिया गया। उत्तर प्रदेश सरकार ने यह भी दिखाया है कि सरकारी स्तर पर कोई भी दावा लंबित नहीं है, इसी प्रकार दिनांक 30-04-2016 तक राष्ट्रीय स्तर पर कुल 44,23,464 दावों में से 38,57,379 दावों का निस्तारण किया गया, जिन में केवल 17,44,274 दावे स्वीकार किये गए तथा कुल 1,03,58,376 एकड़ भूमि आवंटित की गयी जो कि प्रति दावा लगभग 5 एकड़ बैठती है। राष्ट्रीय स्तर पर अस्वीकृत दावों की औसत 53.8 प्रतिशत है जब कि उत्तर प्रदेश में यह 80.15 प्रतिशत है, इससे स्पष्ट है कि उत्तर प्रदेश में वनाधिकार कानून को लागू करने में घोर लापरवाही बरती गयी

है, जिस के लिए उत्तर प्रदेश सरकार बराबर की जिम्मेदार हैं। आदिवासियों के मामले में भी वनाधिकार कानून को लागू करने में राज्यों तथा केन्द्रीय सरकार द्वारा लापरवाही एवं उदासीनता दिखाई गयी है। वर्तमान में भूमि सुधार एवं भूमि आवंटन किसी भी पार्टी के एजंडे में नहीं हैं। जब सरकारों और राजनीतिक पार्टियों का आदिवासियों के सशक्तिकरण की बुनियादी जरूरत भूमि सुधार तथा भूमि आवंटन के प्रति घोर लापरवाही तथा उपेक्षा का रवैया है, तो फिर इन वर्गों के सामने क्या उपाय बचता है?

बटाईदार किसानों का संकट

बटाईदार का आशय ऐसे किसान से है, जो दूसरों की जमीन पर खेती करते हैं और उस फसल का आधा हिस्सा जमीन मालिकों को दे देते हैं। इन लोगों का नाम राजस्व रिकार्ड में दर्ज नहीं होता है, क्योंकि इनके नाम जमीन नही हाती है। एक अनुमान के मुताबिक प्रदेश में लगभग तीन करोड़ किसान व लगभग एक करोड़ बटाईदार किसान हैं, इसके अतिरिक्त बड़ी सख्या में कृषि मजदूर हैं। जो दूसरों के खेत में काम कर अपना गुजर-बसर करते हैं।

बटाईदारी की एक और विधा है, जिसे जानना जरूरी है, जो कमोबेश पूर्वांचल सहित पूरे प्रदेश में प्रचलन में है। वह है कुन्तल पे लेना (इसे अलग-अलग क्षेत्रों में अलग-अलग नामों से बोला और समझा जाता है)। यानि की यहाँ बटाईदार किसी खेत को खेत मालिक से लेकर खेती करता है, और एक निर्धारित हिस्सा फसल चक्र के दौरान खेत मालिक को दे देता है। ध्यान रहे यहाँ खेत मालिक को इस बात से कोई लेना-देना नहीं होता है कि पैदावार हुई या नहीं हुई या कोई और कारण रहा। वह समय पे अपना निर्धारित हिस्सा ले लेता है, जिसे बटाईदार को प्रत्येक स्थिति में देना होता है।

पिछले कई वर्षों से प्रदेश में पर्यावरणीय असंतुलन व मौसम में हुए परिवर्तन के कारण सभी फसल चक्र प्रभावित रहे हैं, अभी पिछले वर्ष 2015 में रबी फसलों के दौरान अतिवृष्टि व ओलावृष्टि के कारण बड़े पैमाने पर फसले बर्बाद हुईं, और एक हजार से अधिक किसानों ने आत्महत्या की या सदमें से उनकी मौत हुई। इसमें ज्यादातर किसान बटाईदार किसान थे। किसान चूंकि जमीन का मालिक हैं, उसका नाम राजस्व रिकार्ड में दर्ज है, फसलों को नुकसान होने की स्थिति में राजस्व विभाग उसी को मुआवजा देता है। किन्तु बटाईदारों को कुछ नहीं मिलता है, क्योंकि जमीन उसके नाम नहीं है और इसलिए राजस्व रिकार्ड में उसका नाम दर्ज नहीं है। जब कि खेती करते समय वह भी अपना बहुत कुछ खेती में निवेश करता है और वहीं खेती उसके लिए भी आस/सहारा होती है। एक तरह से फसलों की बरबादी का ज्यादा गहरा असर बटाईदारों पर ही पड़ता है। बात सिर्फ

फसलों के बर्बादी के बाद मुआवजे की नहीं है, बल्कि अन्य मामलों में भी ऐसा ही होता है। किसान दुर्घटना बीमा योजना के तहत यदि किसी किसान की किन्हीं कारणों से आसामयिक मृत्यु हो जाये, जैसे बिजली गिरने, सांप काटने, दुर्घटना होने आदि से तो किसान को दुर्घटना बीमा योजना के तहत लाभ दिया जायेगा। यहाँ किसान की पात्रता में यह भी है कि किसान का भूमि मालिक होना जरूरी है, अर्थात खतौनी में उसका नाम होना चाहिए। बटाईदारों व भूमिहीनों के लिए यहाँ भी बाधाएं है। उन्हें इस योजना का लाभ नहीं मिल सकता है। जबकि इसके वास्तविक हकदार वही हैं। क्योंकि खेती-किसानी से जुड़े होने के कारण इस तरह की दुर्घटना का शिकार वही होते हैं। अर्थात एक ऐसी नीति की जरूरत है जिसमें बटाईदारों एवं भूमिहीन मजदूरों के कृषि उत्पादन में योगदान को स्वीकार किया जाए एवं ऐसी परिस्थिति में जब कृषि उत्पाद को नुकसान पहुंचे, उन्हें भी मुआवजे का हकदार माना जाए। नुकसान की स्थिति में ऋण माफी या अगली फसल के लिए बीज, खाद, पानी व बिजली पर सब्सिडी का लाभ उन्हें भी मिले।

उ०प्र० जमींदारी विनाश एवं भूमि व्यवस्था अधिनियम-1950 में बटाईदारी या भूमि को लगान पर उठाने के लिए सामान्यतः कोई जगह नहीं है। दरअसल अधिनियम निर्माताओं की नीति थी कि जो भूमि को जोते-बोये, वही भूमि का मालिक हो। यद्यपि अधिनियम यह भी प्रावधान करता है कि जोतदार जब तक 157 (1) में वर्णित अक्षम व्यक्ति न हो, अपनी भूमि को लगान पर नहीं उठा सकता है। यदि वह ऐसा करता है तो उसका अधिकार उस जोत से समाप्त हो जायेगा। दरअसल इस सदिच्छा के पीछे उद्देश्य था कि जमींदारी व्यवस्था दुबारा से सिर न उठा सके। जिसे इतने वर्षों के जद्दोजहद के बाद खत्म किया जा सका है। किन्तु अधिनियम की धारा 157 (1) के अनुसार विशेष दशाओं में ही अपनी भूमि को पट्टे पर दिया जा सकता है। जैसे विकलांगजन जो शारीरिक निर्बलता के कारण खेती करने में असमर्थ हो, पागल व्यक्ति, या जो कारावास में हो, या फिर एकल महिलायें व सेना में कार्यरत लोग, अपने कुल खेत को या उसके किसी भाग को पट्टे पर दे सकते हैं। ध्यान रहे कि अधिनिमय भूमि को लगान पर उठाने पर प्रतिबन्ध लगाता है, किन्तु जोत में साझीदार रखने का नहीं। अधिनियम की धारा 156 (2) का मत-स्पष्टीकरण यह स्पष्ट करता है कि कोई ऐसी व्यवस्था जिसके द्वारा खेती के काम में सक्रिय सहायता या सहयोग देने के बदले किसी भी भूमि की उपज में हिस्सा मात्र पाने का हक प्राप्त होना, लगान पर भूमि को उठाना नही होगा। इस स्पष्टीकरण का लाभ उठाकर तमाम जोतदारो नें अपनी भूमि भूमिहीन खेतिहर मजदूरों को साझेदारी में देने लगे और उनसे उपज का आधा भाग लेने लगे। व्यवहारिक रूप में यह बटाईदारी का ही दूसरा नाम है। जिसमें असल

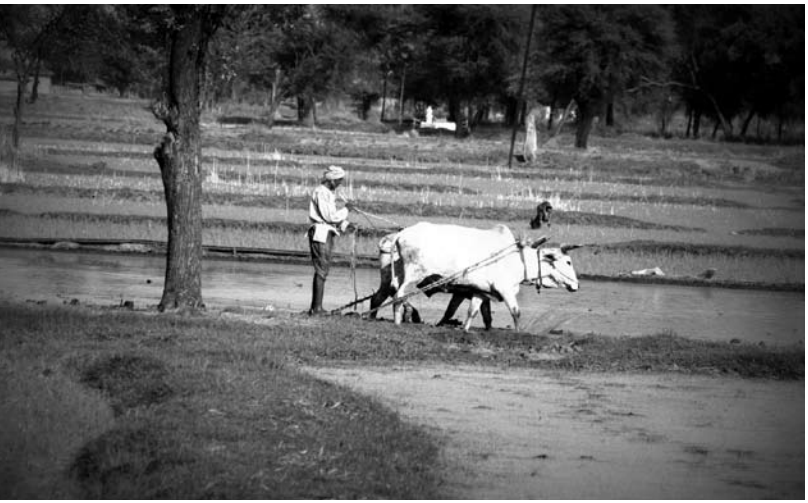

जोतदार न तो श्रम लगाता है और न ही पूंजी, किन्तु उपज का आधा भाग ले लेता है। इस प्रकार अधिनियम भूमि को लगान पर उठाने पर पूर्णतया सफल नहीं रहा। उत्तर प्रदेश भूमि विधि (संशोधन) अधिनियम, 1975 ने इस अधिनियम में संशोधन करके बटाई-प्रथा पर रोक लगाने का प्रयत्न किया। इसके (संशोधन) द्वारा धारा-156 (2) के मूल स्पष्टीकरण के स्थान पर यह स्पष्टीकरण रखा गया कि यदि भूमि का कब्जा किसी जोतदार ने साझीदार को दे दिया है कि वह जोतदार को उपज का आधा (या कोई) भाग देगा, तो इसे लगान पर उठाना माना जायेगा। उत्तर प्रदेश जमींदारी विनाश एवं भूमि व्यवस्था अधिनियम-1950 में धारा 156 का (संशोधित) अधिनियम, 1976 द्वारा स्पष्टीकरण भी निकाल दिया गया, जिससे बटाईदारी की कोई गंजाइश न रहे। इस प्रकार अब बटाई समाप्त हो गई और भूमि में साझीदार की गुंजाइश भी नहीं रह गई।

किन्तु यह सब कुछ खेत मालिक और बटाईदार के बीच मौखिक संविदा के तहत होता है, न कि किसी लिखित संविदा के तहत। सभी जानते हैं कि इन सबका कोई कानूनी आधार नहीं है। प्रदेश में कुल जोतदारी में लगभग आधे से भी अधिक खेती बटाईदारी में हो रही है, जिसे बटाईदार अपने कार्य का कोई कानूनी आधार अथवा लिखित संविदा ने होने के चलते भुगत रहे हैं। वर्ष 2015 में जब 9 नवम्बर को उत्तर प्रदेश सरकार मंत्रिमण्डल की बैठक में राजस्व संहिता 2015 को मंजूरी दी गई है, उसी दौरान राजस्व संहिता तैयार करने वाली समिति से मिलकर सामाजिक संगठनों द्वारा बटाईदारी की समस्या के संदर्भ में समिति को

सुझाव दिया गया था और इस सन्दर्भ में कुछ ठोस कदम उठाने की बात हुई थी। (सामाजिक संगठनों ने सुझाव दिया था कि बटाईदारी के अस्तित्व को स्वीकार करते हुए, राजस्वकर्मियों द्वारा इसे प्रत्येक फसल चक्र के दौरान लिपिबद्ध किया जाये। जिससे फसलों की बर्बादी आदि की स्थति में बटाईदारों को मुआवजा मिल सके। इस सम्बन्ध में किराया-नामा जैसी व्यवस्था की जाये। बटाईदार शब्द के आशय के रूप में बटाईदार पर आश्रित परिवारिक सदस्यों को शामिल माना जाये, जिससे कृषि कर्म या किसी अन्य स्थिति में बटाईदारों के आश्रितों को मुआवजा अथवा सहायता मिल सके) नई राजस्व संहिता की धारा 91 में प्रावधान किया गया कि किसी भूमिधर को अपनी किसी जोत या उसके किसी भाग को बंधक रखने का अधिकार नहीं होगा। इसके साथ ही धारा-95 में यह प्रावधान किया गया कि कोई भूमिधर हो या ग्राम पंचायत से भूमि पाने वाला आसामी, एक बार में सिर्फ तीन वर्ष तक के लिए वह अपनी पूरी जोत अथवा उसके किसी हिस्से को पट्टे पर दे सकता है। किन्तु शर्त यही है कि वह निःशक्त व्यक्ति होना चाहिए, अर्थात खेती करने में असमर्थ। यदि किसी पट्टे का वार्षिक किराया 100 रूपये से अधिक है तो रजिस्ट्रीकृत लिखित द्वारा और अगर 100 रूपये से कम हो तो सम्बन्धित क्षेत्र के राजस्व निरीक्षक द्वारा सत्यापित करा के किया जा सकता है। यह सारी प्रक्रिया 100 रूपये का स्टाम्प शुल्क चुका कर पूरी की जायेगी। चूंकि राजस्व संहिता अर्थात यह प्रावधन 11 फरवरी, 2016 को प्रभावी हुई है, इसलिए यह कहना अभी जल्दबाजी है कि इसका बटाईदारी पर क्या प्रभाव पढ़ा, या फिर स्थितियों में क्या बदलाव आया। यह देखना अभी बाकि है कि इससे बटाईदारों की समास्याओं का किस हद तक समाधान होगा।

नई राजस्व संहिता

उत्तर प्रदेश जमीदारी विनाश एवं भूमि व्यवस्था अधिनियम-1950 और भू-राजस्व अधिनियम 1901 को खत्म कर प्रदेश में, उत्तर प्रदेश राजस्व संहिता 2006 (वर्ष 2015 के संसोधनों द्वारा यथा संशोधित) को प्रदेश में 11 फरवरी, 2016 को लागू किया गया है। उत्तर प्रदेश जमीदारी विनाश एवं भूमि व्यवस्था अधिनियम-1950 के पुराने 39 अधिनियमों को समाप्त कर दिया गया है, और अब नई राजस्व संहिता में 238 धारायें और चार अनुसूचीयाँ हैं। इस प्रकार अब भूमि विधि को काफी संक्षिप्त कर दिया गया है। ऐसी संभावना है कि इससे राजस्व संबंधी वादों के शीघ्र निस्तारण शीघ्र हो सकेंगे। पुराने कानून से नई राजस्व संहिता में प्रमुख रूप से निम्नलिखित बदलाव हुए हैं।

- नई राजस्व संहिता मे मेड़बंदी के मुकदमे 3 माह में निस्तारित करने की समय सीमा निर्धारित की गई है। राजस्व संबंधी वादों के त्वरित निस्तारण के लिए न्यायिक अधिकारियों की तैनाती होगी, जो सिर्फ राजस्व संबंधी मुकदमे ही सुनेंगे।
- नई राजस्व नीति के अंतर्गत अब 50 हजार रुपये तक के बकायेदारों की गिरफ्तारी नहीं होगी।
- इस राजस्व संहिता के तहत पत्नी को जमीन में बराबर का हिस्सा मिलेगा, अविवाहित पुत्री को प्रथम श्रेणी का उत्तराधिकार, आसामी को संक्रमणीय भूमिधर का अधिकार दिया गया है।
- उत्तर प्रदेश राजस्व संहिता नियमावली-2016 में नियम-57 के उपनियम (12) में संशोधन कर तालाबों की पट्टा अवधि को 5 वर्ष से बढ़ाकर 10 वर्ष कर दिया गया। इस संशोधन का उद्देश्य बैंकों द्वारा मत्स्य पालकों को ऋण प्रदान करने में पूर्व में आ रही कठिनाइयों को दूर करना था।
- खतौनी में हर खातेदार के हिस्से का उल्लेख होगा और कई काश्तकारों वाले हर नंबर का भौतिक विभाजन किया जाएगा।

- नामांतरण व इससे जुड़ी कार्यवाही के लिए शुल्क तय किए जाएंगे।
- जमीन खाली होने पर ही पट्टा किया जा सकेगा। पट्टे के पात्र व्यक्ति के घर की जमीन का स्वामित्व उसे दे दिया जाएगा।
- वे असामी जिन्हें जमीन पर अधिकार नहीं मिलता है, उन्हें असक्रंमणीय भूमिधर का अधिकार मिलेगा। बाद में वे संक्रमणीय भूमिधर का अधिकार पा जाएंगे।
- सरकार आवश्यक होने पर जमीन की श्रेणी बदल सकेगी, विकास कार्यों के लिए अर्जित भूमि के बीच में पड़ने वाली लोक उपयोगिता की श्रेणी बदलने के लिए सरकार को सक्षम बनाया गया है, जो विनिमय भी कर सकती है।
- अब कोई अशक्त व्यक्ति अपनी कृषि भूमि का दूसरे के नाम पट्टा भी कर सकता है। अर्थात जो खेती नहीं कर सकते हैं, वे अपनी जमीन न्यूनतम एक साल और अधिकतम एक साल के लिए पट्टे पर दे सकेंगे।
- अगर किसी ने अवैध तरीके से जमीन पर कब्जा किया है, तो उसे आसानी से हटाया जा सकेगा।
- नई राजस्व संहिता के तहत अब राजस्व कोर्ट में नए दायर होने वाले केसों की सुनवाई की जाएगी।
- ठियाबंदी के बाद लगाए सुरक्षा चिन्हों की रखवाली और उनकी हिफाजत करना भूमि स्वामी की ही जिम्मेदारी होगी।
- हदबंदी और आपसी बंटवारे के लिए अब तहसील स्तरीय कोर्ट के ज्यादा चक्कर नहीं लगाने होंगे और न ही लंबे समय तक अंतिम आदेश जारी होने का इंतजार करना होगा। कोर्ट में ऐसे मामलों का राजस्व कोर्ट द्वारा जल्द से जल्द निस्तारण किया जाएगा।
- इसके अलावा निजी भूमि की पैमाइश कराना भी आसान हो जाएगा। कोई भी भूमिधर एक हजार रुपए जमा कर अपनी भूमि की पैमाइश करा सकेगा।
- पैतृक जमीन की खतौनी में कई खातेदार होते हैं। उससे यह साफ नहीं होता है कि कौन सी जमीन किसकी है। यदि आठ खातेदार हैं तो 1/8 लिखा होता है। अब जमीन की खतौनी में सहखातेदारों के नाम के साथ उनके हिस्से का उल्लेख किया जायेगा। जमीन का भी सीमाकंन होगा।
- काश्तकार के अंश का अंकन खतौनी में किया जाएगा। सबसे महत्वपूर्ण यह है कि आबादी की भूमि का दाखिल-खारिज भी होगा, और अब आबादी की भूमि का भी सेटेलमेंट किया जायेगा।

इस प्रकार संहिता का उद्देश्य किसान को उसके दरवाजे पर ही सस्ता, सुलभ, शीघ्र और समयबद्ध न्याय दिलाना है। राजस्व संहिता में अविवादित वादों को ग्राम स्तर पर ही निस्तारित करने के उद्देश्य से ही ग्राम राजस्व समिति का गठन किया जाएगा। समिति में मौजूदा प्रधान अध्यक्ष और हारे हुए निकटतम प्रधान प्रत्याशी को उपाध्यक्ष बनाया जाएगा। समिति में अन्य पांच सदस्य शामिल होंगे। एक सदस्य महिला एवं एक अनुसूचित जाति का प्रतिनिधि होगा। प्रदेश में आयुक्त, जिलाधिकारी, तहसील एवं परगना अधिकारी कार्यालय स्तर पर राजस्व न्यायिक अधिकारियों की तैनाती होगी। संहिता के अनुसार गांव में मृतक के मामले में वरासत ११ वें दिन होगा और खतौनी उपलब्ध करा दी जाएगी। इसके अलावा राजस्व अधिकारी (न्यायिक) की नियुक्ति, खतौनी में खातेदार का उल्लेख, नामान्तरण एवं शुल्क निर्धारण, राजस्व अभिलेखों में त्रुटि में सुधार, आबादी के सर्वे एवं अभिलेख, आवंटित भूमि में पत्नी का बराबरी का हिस्सा, पात्र व्यक्तियों के गृह स्थल का बन्दोबस्त, तहसील स्तर पर समेकित गांव निधि, स्थायी अधिवक्ता एवं नामिका अधिवक्ता की नियुक्ति एवं निगरानी, असामी को असंक्रमणीय भूमिधर का अधिकार, भूमि की श्रेणी बदलने की शक्ति, अकृषि भूमि के दाखिल खारिज, सीलिंग सीमा से अधिक भूमि क्रय करने का प्रतिबन्ध शामिल किया गया है। कृषि कार्य न कर पाने पर कृषि भूमि को पट्टे पर उठाने का अधिकार भी संहिता में दिया गया है, परन्तु इस प्रकार के पट्टे के आधार पर पट्टेदार को कोई भौमिक अधिकार प्राप्त नही होगा। इसके अलावा 50 हजार रुपये से कम बकाया के वसूली में गिरफ्तारी पर रोक एवं शपथ पत्र के आधार पर निस्तारण की व्यवस्था होगी।

नई राजस्व संहिता में कई महत्वपूर्ण प्रावधान करने के बावजूद उ०प्र० जमींदारी विनाश एवं भूमि व्यवस्था अधिनियम 1950 के कई प्रगतिशील प्रावधानों को खत्म कर दिया गया है। जिसके तहत दलित व गरीब समुदाय को विशेष संरक्षण हांसिल था। उत्तर प्रदेश जमींदारी विनाश एवं भूमि व्यवस्था अधिनियम 1950 की धारा 157 क के अंतर्गत अनुसूचित जाति के भूमिधर को जमीनों को गैर अनुसूचित जाति के सदस्यों को खरीदने पर लगे प्रतिबंधों को यथावत रखा जाये। जमींदारी विनाश एवं भूमि व्यवस्था अधिनियम 1950 में भूमि प्रबन्धक समिति द्वारा भूमि आवंटन में वरीयता क्रम का निर्धारण किया गया था। किन्तु नई राजस्व संहिता में इसमें बदलाव कर दिया गया, अर्थात आबादी व कृषि भूमि आवंटन में अनुसूचित जातियों को पिछड़ा वर्ग एवं समाज में गरीबी रेखा से नीचे के सामान्य श्रेणी के व्यक्तियों को एक श्रेणी में रख दिया गया है। क्योंकि एक समुदाय के तौर पर दलित समुदाय ही सबसे ज्यादा भूमिहीन है, इसलिए पुरानी व्यवस्था को बहाल की जानी चाहिए। विकास कार्यों के नाम पर अर्जित भूमि के

बीच में पडने वाली लोक उपयोगिता की श्रेणी बदलने के लिए सरकार को सक्षम बनाया गया है, जो विनिमय भी कर सकती है। जबकि अभी तक तालाब, खलिहान आदि सार्वजनिक भूमि के भू-उपयोग का परिवर्तन राज्य सरकार नहीं कर सकती थी। इससे सार्वजनिक भूमि के निजी हाथों में चले जाने का खतरा पैदा हो गया है। सामाजिक संगठनों की मांग रही है कि दलित व गरीब समुदायों की अधिकारों और हितों को सुनिश्चित करते हुये पूरी राजस्व संहिता का न्यायिक परीक्षण कराया जाये, उसके बाद ही इसे लागू किया जाये।

भू-अधिग्रहण और घटता हुआ खेती का रकबा

जहाँ एक तरफ पूरे प्रदेश में भूमिहीनता का आलम यह है कि 44 प्रतिशत परिवार कृषि भूमिहीन हैं व ग्रामीण क्षेत्रों में 412912 परिवार आवासहीन हैं, और तो और वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार उत्तर प्रदेश राज्य के कुल कर्मकारों में कृषि कर्मकारों का कुल योगदान 59.3 प्रतिशत है, तो वहीं दूसरी तरफ साल दर साल खेती का रकबा घटता जा रहा है। इसका सबसे बड़ा कारण खेती की जमीनों का गैर कृषि उपयोग है। औसतन 40 से 45 हजार हेक्टेयर भूमि हर साल गैर कृषि कार्यों में लगाई जा रही है। सन् 2002 में केन्द्रीय सरकार ने उस कानून को बदल दिया, जिसके जरिये कोई विदेशी कम्पनी भारत में खेती की जमीन खरीद कर अथवा ठेके पर लेकर खेती नहीं कर सकती थी। अभी वर्तमान सरकार 1894 भू-अधिग्रहण कानून की जगह जो नया विधेयक तैयार कर रही है, उसमें जमीन अधिग्रहण में किसानों की सहमति आवश्यक बताने वाली धारा 5 (अ) को खत्म किया जा रहा है। कुल मिलाकर भविष्य में कान्ट्रेक्ट फार्मिंग और कारपोरेट फार्मिंग की तैयारियां जोर-शोर से शुरू की जा रही हैं। उत्तर प्रदेश में भी उत्तर प्रदेश जमींदारी उन्मूलन एक्ट 1950 धारा 3 (अ) 6 (व) में संशोधन करके, निजी कम्पनियों के लिए दी जाने वाली भूमि की मंजूरी का अधिकार मंत्रिमंडल से हटाकर मुख्यमंत्री के अधीन किया जा चुका है। सवाल आखिर यह है कि लाखों लोगों की रोजी-रोटी उजाड़कर, पर्यावरण को नष्ट कर यह विकास किसके लिए है? देखा जाए तो इन नए कानून के दूरगामी और किसानों पर विनाशकारी प्रभाव होंगे। यह सिर्फ किसानों के खिलाफ ही नहीं है, बल्कि इससे राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा के लिए भी गंभीर खतरा पैदा होगा। यह कानून किसानों को मजदूर बनने पर मजबूर करेगा।

सुधारों की चल रही प्रक्रिया के तहत, अर्थात निजीकरण की प्रक्रिया के तहत, नीति आयोग लगातार राज्यों को औद्योगीकरण को बढ़ावा देने के लिए

सुझाव दे रहा है कि राज्य गैर-कृषि उद्देश्यों के लिए भी कृषि भूमि के उपयोग के कानून को उदार बनायें। दरअसली कृषि भूमि का गैर-कृषि उपयोग में परिवर्तन के लिए उचित प्राधिकरण से मंजूरी की आवश्यकता होती है तथा इसमें लंबा समय लगता है। उसका कहना है कि राज्य कानून में इस तरह संशोधन करे कि कृषि भूमि उपयोग के परिवर्तन के लिए मंजूरी देना आसान हो जाये। वर्ष 1993 में उत्तर प्रदेश में कुल 12 लाख हेक्टेअर जमीन ऊसर थी। उत्तर प्रदेश भूमि सुधार निगम ने ऊसर सुधार के लिए विश्व बैंक की सहायता से प्रदेश के 29 जिलों में उत्तर प्रदेश सोडिक लैंड रिक्लेमेशन तृतीय परियोजना चलाई है। किन्तु इन योजनाओं के बाद भी अभी प्रदेश में कुल चार लाख हेक्टेयर जमीन ऊसर और अनुपजाऊ है।

सेज

केन्द्र सरकार द्वारा विशेष आर्थिक क्षेत्र अधिनियम, 2005 को मंजूरी दिये जाने के बाद उत्तर प्रदेश में भी इस सन्दर्भ में गतिविधियाँ शुरू हुई। उत्तर प्रदेश में सर्वाधिक स्पेशल एकोनामिक जोन (सेज) नोएडा में बनाये गये और जमीने अधिग्रिहीत की गईं। इसके अलावा बाराबंकी, वाराणसी, कानपुर, संत कबीर नगर, मुरादाबाद, बुलन्दशहर, भदोही, चन्दौली-वाराणसी आदि शहरों में विभिन्न परियोजनाओं के लिए सेज के तहत जमीन अधिग्रहण किया गया। सेज के लिए राज्यों में बड़े स्तर पर किसानों की जमीनों का अधिग्रहण किया गया, लेकिन इनमें में अधिकांश जमीनों का अभी भी इस्तेमाल नहीं हुआ है। वास्तव में इतने बड़े पैमाने पर सेज के लिए भूमि अधिग्रहण की दरकार ही नहीं थी। विशेष आर्थिक क्षेत्र (सेज) के लिए अधिगृहित की गई भूमि में से इस्तेमाल न होने वाली भूमि किसानों को वापस करने की गुहार संबंधी याचिका पर सुप्रीम कोर्ट ने केंद्र व उत्तर प्रदेश सरकार को इसी साल नोटिस जारी किया है, और चार हप्ते के अन्दर जबाव दाखिल करने का कहा है। उत्तर प्रदेश में सेज के लिए किए गए भूमि अधिग्रहण में करीब 63.24 फीसदी भूमि का इस्तेमाल नहीं हुआ। याचिका में यह भी कहा गया है कि इन प्लॉटों के एवज में कई कॉरपोरेट ने वित्तीय संस्थानों से लोन भी ले रखे हैं। केंद्र सरकार ने उत्तर प्रदेश की राजधानी लखनऊ के बाहर प्रस्तावित सूचना प्रौद्योगिकी (आईटी) सिटी को विशेष आर्थिक क्षेत्र (सेज) का दर्जा देने संबंधी एक प्रस्ताव को मंजूरी दे दी गई है। जिसमें बड़े पैमाने पर कृषि भूमि का गैर-कृषि उपयोग किया जा रहा है।

एक्सप्रेस वे

वर्तमान दशक में कृषि भूमि के गैर-कृषि उपयोग बढ़ाने में एक्सप्रेस वे की भूमिका सबसे ज्यादा रही है। प्रदेश सरकार की महात्वाकांक्षी और चर्चित आगरा-लखनऊ एक्सप्रेस वे में भी जो 302 किलोमीटर लम्बी व 110 मीटर चौड़ी है, आगरा, फिरोजाबाद, मैनपुरी, इटावा, औरैया, कन्नौज, हरदोई, कानपुर नगर और उन्नाव होते हुए लखनऊ तक ज्यादातर खेती की जमीन ही ली गई। जिसमें 10 जिलों के 232 गाँवों से 3500 हेक्टेयर जमीन अधिग्रिहीत की गई है, जिसमें 30 हजार 456 किसानों को अपनी जमीन देनी पड़ी है। इससे पहले पिछली सरकार में, जो इसी योजना का पूर्ववर्ती हिस्सा है, नोएडा से आगरा तक के लिए 165 किमी लंबे एक्सप्रेस वे के लिए कुल 6,600 हेक्टेयर जमीन अधिग्रहीत की गई थी, इसमें से 2,500 हेक्टेयर जमीन रियल एस्टेट परियोजनाओं के लिए थी। इसी तरह अब पूर्वांचल एक्सप्रेस वे के लिए जो लखनऊ से बलिया तक 10 जिलों (लखनऊ, बाराबंकी, अमेठी, सुल्तानपुर, फैजाबाद, अम्बेडकरनगर, आजमगढ़, मऊ, गाजीपुर एवं बलिया) से गुजरेगी और जिसकी लम्बाई 348 किमी व चौड़ाई 120 मीटर होगी। इसमें भी सैकड़ों गाँवों की लगभग चार हजार हेक्टेयर जमीनों का अधिग्रहण प्रस्तावित है। इस प्रस्ताव में 10 प्रतिशत से ज्यादा जमीन ग्रामसभा की ली जानी है।

वैसे तो वर्ष 2008-09 के अनुसार देश के कुल कृषि योग्य भूमि का लगभग 10.52 प्रतिशत (19179 हेक्टेयर) भाग उत्तर प्रदेश में आता है, किन्तु बड़ी आबादी होने के कारण प्रदेश में औसत जोत आकार 0.75 हेक्टेयर है और भारत सरकार की कृषि गणना 2011-12 के अनुसार उत्तर प्रदेश में कुल जोतो में एक हेक्टेयर से कम आकार वाली जोतो का प्रतिशत 79.23 (राष्ट्रीय औसत 64.77 प्रतिशत) है, ऐसे में लगातार बढ़ते कृषि भूमि के गैर-कृषि उपयोग ने खाद्य सुरक्षा के सवाल पर प्रश्न चिन्ह लगा दिया है। यह सारा उपक्रम भोजन के अधिकार का उल्लंघन तो है ही मानवाधिकारों का भी उल्लंघन है।

लगातार घट रहे खेती के रकबे का आलम यह है कि यदि हम पिछले कुछ वर्षों के जोत सम्बन्धी आँकड़ों को देखें तो यह एक ऐसे परिवर्तन को प्रदर्शित करता है, जो आर्थिक दृष्टि से प्रदेश के लिए बिलकुल लाभकारी नहीं है। यह परिवर्तन दरअसल सीमान्त तथा छोटी जोतों की संख्या में लगातार वृद्धि है, और अधिक दुर्भाग्यपूर्ण बात यह है कि सीमान्त जोत के आकार में यह वृद्धि छोटी जोत की तुलना में अधिक है और वर्तमान समय में लगभग 80 प्रतिशत कृषक परिवार लघु

एवं सीमान्त कृषक वर्गों से सम्बन्धित हैं। एक ओर तो इनकी संख्या इतनी अधिक है कि सामाजिक दृष्टि से इनका अत्यधिक महत्व है और दूसरी तरफ कृषि योग्य भूमि का लगभग 52.3 प्रतिशत हिस्सा इनके पास होने से इनका महत्व आर्थिक दृष्टि से अधिक माना जा सकता है। किन्तु सामाजिक एवं आर्थिक दोनों दृष्टियों से महत्वपूर्ण स्थान रखने वाले इस वर्ग की आय इतनी कम है कि इनके गृहस्थ स्तर पर क्रय शक्ति की अपर्याप्तता के कारण इनका उपभोग बढ़ने के बजाय निरन्तर गिरता चला जा रहा है और इधर कुछ वर्षों से तो इनके जीवन में अकाल जैसी स्थिति उत्पन्न होने लगी है। पिछले वर्षों में देखा गया है कि लघु एवं सीमान्त कृषकों को अतिवृष्टि या अनावृष्टि से फसल सम्बन्धी भारी नुकसान उठाना पड़ा है। इससे उनकी आर्थिक स्थिति सुधरने के बजाय और बिगड़ती चली गई है। उत्तर प्रदेश में वर्ष 2015 में कुल मात्र 6 प्रतिशत कृषि को ही फसल बीमा की सुरक्षा प्राप्त थी, इसमें भी लघु एवं सीमान्त कृषकों का प्रतिशत अत्यधिक कम है। अधिकतर बड़े किसान ही अपनी फसल का बीमा कराने में सक्षम होते हैं। छोटे किसान भी प्राकृतिक आपदाओं से आसानी से निपट सकें, इसके लिए एक वृहत योजना बनाने की आवश्यकता हैं, जिसमें अधिक से अधिक कृषकों को सम्मिलित किया जा सके और उन्हें फसल सुरक्षा प्रदान की जा सके है।

(लघु कृषकों से तात्पर्य उन कृषकों से लगाया जाता है, जिनकी कृषि जोत का आकार एक हेक्टेयर से दो हेक्टेयर के बीच होता है तथा सीमान्त कृषकों में उन कृषकों को सम्मिलित किया जाता है, जिनकी कृषि योग्य भूमि का आकार एक हेक्टेयर से कम हो।)

भारत में भूमि सुधार - एक मूल्यांकन

स्वतंत्रता के बाद देश की सरकार का पहला कदम जमींदारी प्रथा का उन्मूलन करना था। चूँकि संविधान में भूमि सुधार राज्य का विषय है, इसलिये प्रत्येक राज्य सरकार को सामंती शोषण को समाप्त करने के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए कानून-बनाने की जरूरत थी। अधिकांश राज्यों में इस प्रक्रिया को पूरा करने में चार-पाँच वर्ष लग गए, जिसके कारण जमींदार गलत ढंग से दस्तावेजों को अपने पक्ष में करने में सफल हो गए। इसके कारण बड़े पैमाने पर काश्तकार बेदखल हुए और जमींदार के नाम की जमीन उसके परिवार के अनेक सदस्यों व फर्जी नामों से तैयार की गई। फलस्वरूप जमींदारी उन्मूलन में भू-स्वामी द्वारा काश्तकारों से लगान वसूल करना तो गैर-कानूनी हो गया, जिससे बिचौलियों की समाप्ति तो हो गई लेकिन भू-जोतों की स्वामित्व पद्धति पर इसका कोई खास असर नहीं पड़ा।

स्वतंत्रता प्रप्ति के इतने सालों बाद अब भारत में मौटे तौर पर भूमि सुधार को असफल माना जा सकता है, आकड़ों के अनुसार 5 फीसदी लोगों ने 32 फीसदी भूमि पर कब्जा कर रखा है। इस मामले में पूरे देश में पश्चिम बंगाल, केरल तथा जम्मू-कश्मीर की हालत ही बेहतर है। कृषि जनगणना 2011-12 और सामाजिक-आर्थिक जाति जनगणना 2011 के आंकड़े के मुताबिक देश के 4.9 फीसदी लोगों के पास 32 फीसदी भूमि है। एक बड़े किसान के पास एक सीमांत किसान से 45 गुना अधिक भूमि है। जमींदारों से लेने के लिए चिह्नित भूमि में से दिसंबर 2015 तक सिर्फ 12.9 फीसदी ही लिए जा सके और दिसंबर 2015 तक 50 लाख एकड़ भूमि 57.8 लाख गरीब किसानों को बांटी जा सकी है। राष्ट्रीय भूमि सुधार नीति के मसौदे में सरप्लस भूमि के वितरण के लिए पश्चिम बंगाल, केरल और जम्मू एवं कश्मीर को सबसे सफल बताया गया है।

दरअसल अधिकतर राज्यों द्वारा 1961 तक हदबंदी कानून पास करने के बावजूद 1970 तक बिहार, कर्नाटक, केरल उड़ीसा और राजस्थान जैसे राज्यों में एक एकड़ अतिरिक्त भूमि घोषित नहीं किया गया। आंध्रप्रदेश में मात्र 1400 एकड़ भूमि हदबन्दी के बाद घोषत की गई, लेकिन कोई भी जमीन बांटी नहीं गई। सिर्फ

जम्मू-कश्मीर ही ऐसा राज्य था, जहाँ 1955 के मध्य तक हदबंदी कानून पूरी तरह लागू हुआ। काश्तकारों और भूमिहीन मजदूरों को 1,30,000 एकड़ अतिरिक्त जमीन का बंटवारा किया गया और वह भी बिना मुआवजा दिये। लेकिन यदि पूरे भारत को देखा जाये तो 1970 के अंत तक सिर्फ 24 लाख एकड़ जमीन अतिरिक्त घोषित की गई। बांटी गई जमीन इस जमीन का मात्र आधा थी, जो भारत में कुल जोते जाने वाली जमीन का मात्र 0.3 प्रतिशत थी।

इसके बाद पश्चिम बंगाल में 1977 में सत्ता में आने के बाद वाम मोर्चा सरकार के नेतृत्व में 'ऑपरेशन बरगा' चलाया गया, जो काफी हद तक सफल रहा। इसके तहत अतिरिक्त भूमि का वितरण भूमिहीन किसानों के बीच किया गया था। ऑपरेशन बरगा के जरिए राज्य में बटाईदारों को भूमि के कानूनी अधिकार सौंपे गए और इससे करीब 15 लाख अतिरिक्त किसानों को फायदा पहुंचा। इन योजनाओं ने पश्चिम बंगाल के ग्रामीण इलाकों की तस्वीर बदल दी, जो एक समय अपने धनाढ्य जमींदारों के लिए जाना जाता था। अब इसकी 84 फीसदी भूमि पर छोटे और सीमांत किसानों का अधिकार है। ऑपरेशन बरगा के तहत बटाई पर खेती करने वालों को टेनेंसी राइट दिए गए। इसका असर यह हुआ कि जो लोग बटाईदार के तौर पर रजिस्टर किए गए, उन्हें इस हक से बेदखल करना मुश्किल हो गया। दरअसल बटाईदार ही खेतों के मालिक बन गए हैं, हलांकि कागजों में मालिकाना हक उनके पास नहीं है। पश्चिम बंगाल ने 14.1 लाख एकड़ भूमि सरप्लस घोषित की, जो देश में कुल सरप्लस घोषित भूमि का 21 फीसदी है। राज्य सरकार ने सरप्लस घोषित भूमि में से 93.6 फीसदी या 13.2 लाख एकड़ पर सरकारी कब्जा किया और सरकारी कब्जे का 79.8 फीसदी यानि कि 10.5 लाख एकड़ भूमि वितरित की। यह उल्लेखनीय है कि पश्चिम बंगाल ने गोवा के क्षेत्रफल से अधिक भूमि ग्रामीण भूमिहीन किसानों को वितरित की, और इस प्रकार सारे देश के लिए एक उदाहरण प्रस्तुत किया।

पश्चिम बंगाल में भूमि सुधार की सफलता को बिहार में दोहराने के उद्देश्य से बिहार सरकार ने साल 2006 में राज्य के लिए, पश्चिम बंगाल में भूमि सुधार आयोग के अगुवा रहे डी० बंद्योपाध्याय के नेतृत्व में तीन सदस्यीय भूमि सुधार आयोग गठित करने की घोषणा की। फिर आयोग ने 2008 में अपनी रिपोर्ट राज्य सरकार को सौंप दी थी। आयोग को जो कार्यक्षेत्र दिए गए थे, उनमें सबसे प्रमुख था, भूमि हदबंदी के प्रभावी उपाय, जमीन का सर्वेक्षण, मालिकाना और बटाईदारी के अधिकार तथा जमीन से जुड़े सामान्य सवाल आदि। आयोग ने अपनी रिपोर्ट में 1990 के दशक के दौरान भूमिहीनता का आंकड़ा रखा, इन आंकड़ों के अनुसार इस दौरान राज्य में भूमिहीनता की दर चिंताजनक हद तक बढ़ गई। आयोग के

अनुसार 67 प्रतिशत ग्रामीण गरीब 1993-1994 में भूमिहीन या लगभग भूमिहीन थे, यह आंकड़ा 1999-2000 तक 75 प्रतिशत हो गया। इस दौरान भूमि संपन्न समूहों में गरीबी घटी, जबकि भूमिहीन समूहों की गरीबी 51 प्रतिशत से बढ़कर 56 प्रतिशत हो गई। लेकिन आंकड़े हमेशा भयावहता की पूरी तस्वीर पेश नहीं करते, यहां भी गरीबी के तत्कालीन सूचकांक की कोई चर्चा नहीं है।

आयोग ने अपनी रिपोर्ट में भूमिहीनों के हितों की रक्षा के लिए कुछ प्रमुख अनुशंसाएं भी की हैं। जैसे कि बिहार में कुल 18 लाख एकड़ तक फैली अतिरिक्त जमीनें हैं, ये जमीनें या तो सरकारी नियंत्रण में है या भूदान समिति के नियंत्रण में, जिसे बांटा नहीं जा सका है या सामुदायिक नियंत्रण में या कुछ अन्य लोगों के कब्जे में है, आयोग ने इन जमीनों को भूमिहीनों में बांटने की अनुशंसा की है। आयोग की सिफारिश है कि बटाईदारों की रक्षा के लिए एक अलग बटाईदारी कानून होना चाहिए। किसी भूमि पर मात्र दो श्रेणियों के व्यक्ति का अधिकार हो (क) रैयत, जिसे भूमि पर पूर्ण स्वामित्व, अधिकार तथा हित रहेगा (ख) बटाईदार, जिसे स्वामित्व का अधिकार नहीं, बल्कि भूमि पर लगातार जोत-आबाद का अधिकार रहेगा। हर बटाईदार के पास पर्चा रहे, जिसमें भू-स्वामी का नाम तथा जिस भूखंड पर वह जोत कर रहा है, उसकी संख्या रहे, पर्चा की सत्यापित प्रति भू-स्वामी को दी जाए। बटाईदार का जोत आबाद का अधिकार अनुवांशिक रहे, यानी पीढ़ी दर पीढ़ी वो उसपर खेती कर सके।

आयोग के अनुसार कृषि और गैर कृषि भूमि के बीच अंतर को समाप्त कर दिया जाना चाहिए, भूमि को उसके सरल अर्थ में परिभाषित किया जाना चाहिए,

ताकि किसी को सीलिंग प्रावधानों से किसी जमीन को कृषि योग्य और किसी को अन्य प्रकार का बनाकर बच निकलने का अवसर न मिले। सीलिंग के दायरे से प्लांटेशन, बगीचा, आम-लीची के बगीचे, मत्स्य पालन तथा अन्य विशिष्ट श्रेणियों के भूमि उपयोग को दी गई छूट समाप्त कर दी जाए। पांच या अधिक सदस्यों वाले परिवार के लिए 15 एकड़ भूमि की सीमा होनी चाहिए, यदि परिवार का कोई प्लान्टेशन, बाग-बगीचा आदि हो तो उसे यह चुनाव का अधिकार रहे कि वह या तो उन्हें 15 एकड़ तक रखें अथवा 15 एकड़ तक धान/गेहूँ की जमीन रखें। आयोग के अनुसार 1950 से मौजूद मठों, मंदिर-चर्च सहित धार्मिक संस्थाओं को 15 एकड़ की एक इकाई दी जाए। अनेक देवी-देवताओं वाले मंदिर को भी एक धार्मिक इकाई के रूप में सिर्फ एक हदबंदी दी जाए। एक मंदिर एक इकाई माना जाए तथा यदि एक ही परिसर में या निकटवर्ती परिसर में कई मंदिरों का समूह हो तो भी वह एक ही इकाई में आ जाए। आयोग अधिगृहित जमीनों के समुचित उपयोग की बात कहता है, इसके अनुसार ऐसी अनेक मिलें, फैक्ट्रियां, संस्थाएं तथा संगठन हैं जिनके स्वामित्व तथा दखल में बड़े पैमाने पर भूमि है। सरकार को यह परीक्षण करने का अधिकार होना चाहिए कि उपर्युक्त संस्थाओं ने जिन उद्देश्यों के लिए जमीन हासिल की थी, उनका उपयोग उसी प्रयोजन से हुआ है या नहीं। उसके बाद निकट भविष्य में इनके सुदृढ़ और प्रतिबद्ध विस्तारीकरण कार्यक्रम को ध्यान में रखते हुए सरकार को यह अधिकार रहेगा कि किसी अतिरेक भूमि का पुनर्ग्रहण कर ले और या इकाई चलाने के लिए उन्हें अतिरिक्त आवश्यक भूमि रखने करने की अनुमति दे। यह सिद्धान्त भविष्य में किसी नई इकाई पर भी स्वतः लागू होगा। कॉर्पोरेट खेती के सभी पहलुओं को समाहित करते हुए एक कानून होना चाहिए, ताकि किसानों विशेषकर मध्यम, लघु तथा सीमान्त किसानों को कॉर्पोरेट संगठनों के शोषण और दमन से सुरक्षा दी जा सके। कॉर्पोरेट संगठनों और किसानों-व्यक्तिगत या उनकी सामूहिक संस्था जैसे किसान संगठन और कृषक सहकारी समूहों के बीच एक साफ और पारदर्शी अनुबंध होना चाहिए।

आयोग ने सरकार से सभी गरीबों को एक एकड़ और भूमिहीनों को 10 डिसमिल जमीन देने का भी सुझाव दिया था, किन्तु सरकार ने गरीबों को एक एकड़ और भूमिहीनों को 10 डिसमल जमीन देने की सिफारिश को दरकिनार करते हुए सिर्फ तीन डिसमल जमीन देने की बात कही और फिर सरकार का यह वायदा भी प्रभावी तरीके से पूरा नहीं हुआ। इसके साथ ही आयोग ने बिहार में नया बटाईदार कानून लाने, वर्तमान कानून में संशोधन करने, गैरमजरूआ जमीन का उचित इस्तेमाल करने, भू-हदबंदी को सही तरीके से लागू करने तथा भूदान से मिली जमीन को विवादों के निपटारे का सुझाव दिया था। नया भूमि सर्वे तथा

चकबंदी के बारे में भी यही प्रचारित किया गया कि यह बंटाईदारी कानून का ही दूसरा रूप है, ऐसे में पुराने अनुभव के आधार पर यह मानने का कोई कारण नजर नहीं आता कि सरकार को इसमें सफलता मिलेगी। बंटाईदारी कानून के मोर्चे पर पूरी तरह विफल रहने के बाद राज्य सरकार ने सर्वे तथा चकबंदी का सहारा लिया, भूमि के मामलो में ऐसे उदाहरणों की कमी नहीं है, जो यह साबित कर सकें कि सरकार का वायदा बहुत कमजोर निकला।

इसी तरह उत्तर प्रदेश में भी जब हेमवती नन्दन बहुगुणा सरकार से तराई के भीतर जमीनों के असमान बंटवारे की शिकायत की गई और यह सीलिंग व चकबंदी कानून को अमल में लाने की गुजारिश की गई तो इस मामले को लेते हुए हेमवती नन्दन बहुगुणा ने 8 फरवरी, 1972 को उत्तर प्रदेश विधान सभा और विधान परिषद की उत्तर प्रदेश भूमि व्यवस्था जांच समिति नाम से एक साझा जांच समिति बनाई। मंगल देव विशारद को इस जांच समिति का अध्यक्ष बनाया गया था, जिसे मंगलदेव विशारद समिति कहा जाता है। इस समिति ने मार्च, 1974 को अपनी विस्तृत जांच रपट राज्य सरकार को सौपीं। रिपोर्ट में कहा गया कि तराई में 185 खातों में 474 खातेदारों के नाम 25379 एकड़ जमीन दर्ज है। यानी हरेक खातेदार के नाम औसतन 137 एकड़ जमीन दर्ज है। कहा गया कि सैकडों खातों में 50 एकड़ से ज्यादा जमीनें दर्ज है। जिनका इन्द्राज कई लोगों के नाम पर है। लेकिन जमीन का वास्तविक मालिक एक ही व्यक्ति है। रिपोर्ट में कहा गया कि तराई में स्थित गांव सभा, गोदान, भू-दान, बांधों तथा जलाशयों की अतिरिक्त भूमि, वन विभाग को पौधारोपण के लिए दी गई भूमि, वन भूमि, खाम भूमि, वर्ग-चार और वर्ग-आठ की भूमि और वन पंचायतों की बेहिसाब भूमि भी कब्जा ली गई है। मंगल देव विशारद जांच कमेटी ने अपनी रिपोर्ट में बड़े फार्म हाऊसों के कब्जे की अतिरिक्त जमीनों का विस्तृत और प्रमाणिक ब्यौरा दिया था। इस समिति ने उत्तर प्रदेश अधिकतम जोत सीमा आरोपण अधिनियम-1960 के तहत तराई में सीलिंग में निकलने वाली जमीनों को बांटने के लिए बकायदा तरीका भी सुझाया था। समिति ने सिफारिश की थी कि सीलिंग में अतिरिक्त निकली जमीनें क्रमशः युद्ध में वीरगति को प्राप्त सैनिक के भूमिहीन आश्रितों, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के भूमिहीन खेतिहर मजदूरों, अन्य भूमिहीन खेतहर मजदूरों, भूमिहीन भूतपूर्व सैनिक व भूमिहीन राजनीतिक पीड़ितों और छोटे कास्तकारों, जिनके पास 3 एकड़ से कम जमीन है, को बांटी जाए। शुरुआत में समूचे उत्तर प्रदेश में मंगलदेव विशारद जांच कमेटी की इसी रिपोर्ट के आधार पर ही सीलिंग की कार्रवाई होती थी। बाद में इस रिपोर्ट को महत्व देना एक तरह से बंद कर दिया गया।

हमारी पैरोकारी

दलितों के लिए भूमि के महत्त्व पर डॉ० आंबेडकर ने 23 मार्च, 1956 को आगरा के भाषण में कहा था, मैं गाँव में रहने वाले भूमिहीन मजदूरों के लिए काफी चिंतित हूँ, मैं उनके लिए ज्यादा कुछ नहीं कर पाया हूँ, मैं उनके दुःख और तकलीफें सहन नहीं कर पा रहा हूँ, उनकी तबाहियों का मुख्य कारण यह है कि उनके पास जमीन नहीं है, इसीलिए वे अत्याचार और अपमान का शिकार होते हैं, वे अपना उत्थान नहीं कर पाएंगे। मैं इनके लिए संघर्ष करूँगा, यदि सरकार इस कार्य में कोई बाधा उत्पन्न करती है तो मैं इन लोगों का नेतृत्व करूँगा और इन की वैधानिक लड़ाई लड़ूंगा, लेकिन किसी भी हालत में भूमिहीन लोगों को जमीन दिलवाने का प्रयास करूँगा। इस से स्पष्ट है कि बाबा साहब दलितों के उत्थान के लिए भूमि के महत्व को जानते थे और इसे प्राप्त करने के लिए वे कानून और जनांदोलन के रास्ते को अपनाने वाले थे, परन्तु वे इसे मूर्त रूप देने के लिए अधिक दिन तक जीवित नहीं रहे।

हमारी माँग सिर्फ ग्रामसभा की जमीनों के पट्टे अथवा उनके कब्जे तक ही नहीं है, बल्कि उपरोक्त विचारों एवं तथ्यों के आलोक में भूमि सुधार आयोग का गठन करते हुए पूरे प्रदेश की जमीनों का अध्ययन कराया जाना चाहिए, इसमें सभी तरह की जमीने, चाहे वह उद्योग धन्धे में लगी या इसके नाम पर ली गई जमीने हों, या चाहे वह सरकारी विभागों की जमीने हों, या फिर वन्यजीव संरक्षण के नाम पर आरक्षित जमीने हों या फिर धार्मिक संस्थाओं व जीव-जन्तुओं के नाम पर कब्जाई गई जमीने हों, इन सबका पता लगाकर और अध्ययन कर वास्तविक खेतिहर लोगों अथवा उस पर आश्रित लोगों में समान रूप से बाँटी जानी चाहिए, और यह कार्य एक निश्चित समय सीमा में या एक पचंवर्षीय योजना में ही पूरा किया जाना चाहिए, साथ ही भूमि सुधार कानून में भूमि स्वामित्व की उच्चतम सीमा को कम करके मात्र ५ एकड़ किया जाना चाहिए। नई आर्थिक नीतियों के लागू होने के बाद जिस तरह से खेती की जमीनों का गैर कृषि उपयोग बढ़ा है, फलस्वरूप खेती का रकबा घटा है, किसी भी उद्देश्य अथवा बहाने से खेती की जमीनों का गैर कृषि उपयोग बन्द होना चाहिए। कुछ लोगों के मुनाफे की खातिर आम लोगों की जबारिया बेदखली

और भू अधिग्रहण, सिर्फ खाद्य-सुरक्षा का सवाल नहीं है, बल्कि यह आम लोगों के सवैंधानिक अधिकारों पर हमला है। यह अमानवीयता दलितों और वंचितों की जिन्दगी से जुड़ा मानवाधिकार का भी सवाल है।

हमारी माँगें

- सभी कृषि भूमिहीन परिवारों को न्यूनतम 5 एकड़ सींचित जमीन के पट्टे दिए जायें, जो महिला के नाम हो, यदि पट्टा संयुक्त रूप से मिलता है, तो भी पहला नाम महिला का हो।
- सभी आवासहीन परिवारों को अवासीय भूमि के पट्टे दिए जायें, जो महिलाओं के नाम हों।
- सीलिंग व पट्टों से सम्बंधित न्यायालयों में लम्बित मामलों के त्वरित निस्तारण हेतु फास्ट ट्रैक कोर्ट का गठन किया जाये।
- कमजोर, वंचित और दलित लोगों के नाम आंवटित पट्टों पर उनकी कब्जेदारी को सुनिश्चित किया जाये।
- जिस ग्रामसभा जमीन पर जिस भूमिहीन का कब्जा 1 मई 2007 से है, उसका जमीन पर 122 बी 4 एफ, व 123 एक के अधार पर नाम दर्ज किया जाये।
- शहरी मलिन बस्तियों में ग़ैरक़ानूनी बेदखली को रोकते हुए, उसमें रहने वालों को मालिकाना हक दिया जाय।
- किसी भी उद्देय अथवा बहाने से खेती की जमीनों का गैर कृषि उपयोग बन्द किया जाये।
- उत्तर प्रदेश में भूमि सुधारों को लागू करने के लिए भूमि सुधार आयोग का गठन किया जाये।
- नई राजस्व संहिता पर पुनर्विचार और अपेक्षित संशोधन किया जाए, जिससे कि दलितों व वंचितों के भूमि अधिकारों की अनदेखी न हो सके।

परिशिष्ट-1

उत्तर प्रदेश भूदान यज्ञ के अन्तर्गत जनपदों में प्राप्त/आवंटित/अवैध अतिक्रमित भूमि का विवरण:

क्र.	जनपद का नाम	भूदान में प्राप्त कुल भूमि का विवरण		भूदान में प्राप्त कुल आवंटित की गयी भूमि का विवरण		भूदान की अवशेष भूमि का विवरण	
		संख्या	क्षेत्रफल (हेक्टेअर में)	संख्या	क्षेत्रफल (हेक्टेअर में)	संख्या	क्षेत्रफल (हेक्टेअर में)
1	2	3	4	5	6	7	8
1	अलीगढ						
2	एटा	0	0.000	0	0.000	0	0.000
3	हाथरस						
4	कासगंज						
अलीगढ़ मं.		0	0.000	0	0.000	0	0.000
5	आगरा	11	14.362	6	7.898	5	6.464
6	फिरोजाबाद						
7	मथुरा						
8	मैनपुरी						
आगरा मण्डल		11	14.362	6	7.898	5	6.464
9	आजमगढ	15	2.286	9	0.769	6	1.517
10	बलिया	0	0.000	0	0.000	0	0.000
11	मऊ	0	0.000	0	0.000	0	0.000
आजमगढ मण्डल		15	2.286	9	0.769	6	1.517
12	इलाहाबाद						
13	कौशाम्बी	11	159.000	170	20.147	11	0.000
14	प्रतापगढ						
15	फतेहपुर	0	0.000	0	0.000	0	0.000
इलाहाबाद मण्डल योग		11	159.000	170	20.147	11	0.000
16	इटावा	45	24.927	18	15.607	27	9.320

17	औरेया						
18	कन्नौज	1	0.020	0	0.000	1	0.020
19	कानपुर नगर	901	681.670	182	189.965	761	491.710
20	फर्रूखाबाद						
21	कानपुर देहात	1806	2674.177	1648	2622.449	158	51.728
कानपुर मण्डल योग		2753	3380.794	1848	2828.021	947	552.778
22	कुशीनगर	2	0.162	0	0.000	2	0.162
23	गोरखपुर	0	0.000	0	0.000	0	0.000
24	देवरिया	0	0.000	0	0.000	0	0.000
25	महाराजगंज						
गोरखपुर मण्डल योग		2	0.162	0	0.000	2	0.162
26	चित्रकूट	0	1181.745	723	779.074	0	402.671
27	बांदा						
28	महोबा	2186	4407.987	1836	4200.469	350	260.518
29	हमीरपुर	133	336.403	35	131.685	98	204.646
चित्रकूटधाम मण्डल योग		2319	5926.135	2594	5111.228	448	867.835
30	जालौन	1602	3805.915	1442	3119.990	160	685.930
31	झांसी	289	397.417	245	371.848	44	25.573
32	ललितपुर	412	1057.521	399	924.415	13	133.106
झांसी मण्डल		2303	5260.853	2086	4416.253	217	844.609
33	गोण्डा						
34	बलरामपुर						
35	बहराइच	0	0.000	0	0.000	0	0.000
36	श्रावस्ती	32	5.189	0	0.000	32	5.189
देवीपाटन मंडल योग		32	5.189	0	0.000	32	5.189
37	अम्बेडकर नगर	2010	745.509	1954	726.686	56	18.873
38	अमेठी	65	11.189	0	0.000	61	10.945
39	फैजाबाद	0	0.000	0	0.000	0	0.000
40	बाराबंकी	650	194.490	505	112.433	146	42.054

41	सुल्तानपुर	888	187.416	7	3.933	881	183.483
फैजाबाद मण्डल योग		3613	1138.604	2466	843.052	1144	255.355
42	पीलीभीत						
43	बदायूँ		28.398	0	0.000	0	0.000
44	बरेली						
45	शाहजहॉपुर						
बरेली मण्डल		0	28.398	0	0.000	0	0.000
46	बस्ती	152	360.074	92	255.110	67	0.000
47	संत कबीरनगर	0	0.000	0	0.000	0	0.000
48	सिद्वार्थ नगर	155	52.836	143	49.144	12	3.722
बस्ती मंडल योग		307	412.910	235	304.254	79	3.722
49	गाजियाबाद	0	0.000	0	0.000	0	0.000
50	गौतम बुद्व नगर						
51	हापुड़						
52	बुलन्दशहर	52	28.496	51	28.370	1	0.126
53	बागपत	0	0.000	0	0.000	0	0.000
54	मेरठ						
मेरठ मण्डल		52	28.496	51	28.370	1	0.126
55	अमरोहा						
56	बिजनौर	205	205.081	148	168.153	53	35.979
57	संभल						
58	मुरादाबाद	86	0.443	0	0.000	86	0.443
59	रामपुर						
मुरादाबाद मण्डल योग		291	205.524	148	168.153	139	36.422
60	मिर्जापुर	66	112.465	0	0.000	66	112.465
61	संत रविदास नगर						
62	सोनभद्र	826	1673.918	784	1659.555	42	14.363
विन्ध्याचल मंडल योग		892	1786.383	784	1659.555	108	126.828
63	उन्नाव	189	51.985	21	10.385	168	40.673
64	खीरी						

65	रायबरेली	278	79.767	8	6.225	264	71.460
66	लखनऊ						
67	सीतापुर	3	3.892	0	0.000	3	3.897
68	हरदोई	2	34.430	58	26.529	0	7.902
लखनऊ मण्डल योग		472	170.074	87	43.139	435	123.932
69	गाजीपुर	4	145.785	1	145.120	3	0.665
70	चंदौली						
71	जौनपुर	716	69.006	436	50.257	280	18.749
72	वाराणसी	91	8.513	1	0.036	90	5.477
वाराणसी मण्डल योग		811	223.304	438	195.413	373	24.891
73	शामली	0	0.000	0	0.000	0	0.000
74	मुजफ्फरनगर	179	87.268	178	86.945	1	0.323
75	सहारनपुर						
सहारनपुर मंडल योग		179	87.268	178	86.945	1	0.323
प्रदेश का योग		14063	18829.7	11100	15713.197	3948	2850.153

स्रोतः राजस्व परिषद, लखनऊ, उत्तर प्रदेश

परिशिष्ट-2

उत्तर प्रदेश में दलित समुदाय के भूमिहीन परिवारों का विवरण

जिले का नाम	कुल परिवार	कुल अनुसूचित जाति परिवार	अनुसूचित जाति में भूमिहीन परिवार	अनुसूचित जाति में भूमिहीन परिवार (प्रतिशत)
सहारनपुर	418340	78671	51418	65%
मुजफ्फरनगर	502344	52149	33121	63%
बिजनौर	495304	137022	87679	63%
मुरादाबाद	521305	99885	64778	64%
रामपुर	299340	40862	19883	48%
ज्योतिबा फुले नगर	228537	21643	6543	29%
मेरठ	261180	55321	45264	81%
बागपत	161232	12328	6697	54%
गाजियाबाद	295081	40333	24621	61%
गौतम बुद्ध नगर	289590	30849	11485	37%
बुलन्दशहर	427475	96866	71953	74%
अलीगढ़	418563	98088	74485	75%
महामाया नगर	199901	39864	26347	66%
मथुरा	294772	52966	38889	73%
आगरा	375187	70720	37717	53%
फिरोजाबाद	265386	54952	38664	70%
मैनपुरी	258844	52918	21274	40%
बदायूं	480817	84478	38661	45%
प्रदेश बरेली	475247	67184	43235	64%
पीलीभीत	303726	64497	39950	62%
शाहजहाँपुर	405601	73965	46404	62%
लखीमपुर खीरी	640850	200720	116224	57%

सीतापुर	714977	273057	138080	51%
हरदोई	617677	206893	80816	39%
उन्नाव	481545	164296	79896	49%
लखनऊ	278203	116590	69725	60%
रायबरेली	569800	194682	134033	69%
फर्रूखाबाद	249331	44885	28799	64%
कन्नौज	237103	50188	25571	51%
इटावा	213944	57833	34396	59%
औरैया	209864	58748	34589	59%
कानपुर देहात	310765	81990	53674	65%
कानपुर नगर	289213	69665	42298	61%
जालौन	211977	62936	38129	61%
झांसी	212906	65333	30297	46%
ललितपुर	186311	42715	9958	23%
हमीरपुर	174857	39229	28781	73%
महोबा	127389	37517	25795	67%
बांदा	269240	49866	36881	74%
चित्रकूट	152132	36801	26109	71%
फतेहपुर	415053	114505	84867	74%
प्रतापगढ़	494720	123039	84128	68%
कौशाम्बी	255994	85043	63095	74%
इलाहाबाद	705588	181545	136682	75%
बाराबंकी	533550	174547	84503	48%
फैजाबाद	377144	105086	67382	64%
अम्बेडकर नगर	322410	94209	63234	67%
सुल्तानपुर	563089	137814	95041	67%
बहराइच	541484	88608	35930	41%
श्रावस्ती	179481	36889	14884	40%
बलरामपुर	293520	45441	28067	62%
गोण्डा	523254	98452	53270	55%

सिद्धार्थनगर	382311	74907	43195	58%
बस्ती	385828	96972	61755	64%
संत कबीर नगर	243670	62049	39951	64%
महाराजगंज	407828	94200	54510	58%
गोरखपुर	599152	162199	123345	76%
कुशीनगर	574969	129269	89615	69%
देवरिया	450667	93421	50332	54%
आजमगढ़	615199	138262	55197	40%
मऊ	262251	70309	45785	65%
बलिया	426709	78976	59143	75%
जौनपुर	596098	151908	78398	52%
गाजीपुर	476147	123369	57045	46%
चन्दौली	265851	74079	61478	83%
वाराणसी	343657	64694	48303	75%
संत रविदास नगर	191630	48658	36980	76%
मिर्जापुर	340748	106395	79546	75%
सोनभद्र	288433	81512	55548	68%
ऐटा	241868	39232	22275	57%
काशीराम नगर	191433	36663	19060	52%
उत्तर प्रदेश	26015592	6191757	3755663	60%

उपरोक्त आंकड़े अनुमानित हैं, जो सामाजिक, आर्थिक जातिगण जनगणना- 2011 के विश्लेषण पर आधारित है।

परिशिष्ट-3

उत्तर प्रदेश में आवासहीन परिवारों का विवरण

जिले का नाम	कुल परिवार	कुल परिवार (ग्रामीण क्षेत्र)	आवासहीन परिवार (ग्रामीण क्षेत्र)	आवासहीन परिवार (ग्रामीण क्षेत्र) प्रतिशत में
सहारनपुर	602086	418340	194	0.05%
मुजफ्फरनगर	679137	502344	27	0.01%
बिजनौर	637235	495304	24	0.00%
मुरादाबाद	752765	521305	65	0.01%
रामपुर	392482	299340	33	0.01%
ज्योतिबा फुले नगर	304808	228537	17	0.01%
मेरठ	537449	261180	58	0.02%
बागपत	206743	161232	23	0.01%
गाजियाबाद	808016	295081	91	0.03%
गौतम बुद्ध नगर	315572	289590	16	0.01%
बुलन्दशहर	550880	427475	69	0.02%
अलीगढ़	585140	418563	125	0.03%
महामाया नगर	248854	199901	31	0.02%
मथुरा	395832	294772	632	0.21%
आगरा	645416	375187	344	0.09%
फिरोजाबाद	388465	265386	42	0.02%
मैनपुरी	306027	258844	388	0.15%
बदायूं	581429	480817	69	0.01%
प्रदेश बरेली	705638	475247	86	0.02%
पीलीभीत	358544	303726	79	0.03%
शाहजहाँपुर	498735	405601	235	0.06%
लखीमपुर खीरी	709961	640850	465	0.07%
सीतापुर	792097	714977	507	0.07%

हरदोई	693224	617677	201	0.03%
उन्नाव	553262	481545	111	0.02%
लखनऊ	780431	278203	157	0.06%
रायबरेली	619591	569800	602	0.11%
फर्रूखाबाद	321412	249331	313	0.13%
कन्नौज	282050	237103	92	0.04%
इटावा	272319	213944	128	0.06%
औरैया	240075	209864	315	0.15%
कानपुर देहात	337565	310765	143	0.05%
कानपुर नगर	768845	289213	280	0.10%
जालौन	276680	211977	124	0.06%
झांसी	341050	212906	12	0.01%
ललितपुर	214947	186311	201	0.11%
हमीरपुर	209475	174857	12	0.01%
महोबा	159751	127389	32	0.03%
बांदा	315136	269240	73	0.03%
चित्रकूट	166772	152132	47	0.03%
फतेहपुर	469394	415053	115	0.03%
प्रतापगढ़	517069	494720	148	0.03%
कौशाम्बी	273780	255994	68	0.03%
इलाहाबाद	916187	705588	234	0.03%
बाराबंकी	575821	533550	333	0.06%
फैजाबाद	427113	377144	109	0.03%
अम्बेडकर नगर	362498	322410	202	0.06%
सुल्तानपुर	585218	563089	153	0.03%
बहराइच	579621	541484	231	0.04%
श्रावस्ती	185160	179481	45	0.03%
बलरामपुर	316091	293520	113	0.04%
गोण्डा	551769	523254	202	0.04%

सिद्धार्थनगर	403454	382311	695	0.18%
बस्ती	406145	385828	457	0.12%
संत कबीर नगर	258548	243670	173	0.07%
महाराजगंज	426822	407828	290	0.07%
गोरखपुर	715618	599152	491	0.08%
कुशीनगर	596770	574969	264	0.05%
देवरिया	496289	450667	145	0.03%
आजमगढ़	655608	615199	38	0.01%
मऊ	320844	262251	275	0.10%
बलिया	464484	426709	194	0.05%
जौनपुर	639752	596098	154	0.03%
गाजीपुर	512507	476147	246	0.05%
चन्दौली	293156	265851	370	0.14%
वाराणसी	526643	343657	290	0.08%
संत रविदास नगर	218244	191630	80	0.04%
मिर्जापुर	387696	340748	289	0.08%
सोनभद्र	320377	288433	110	0.04%
ईटा	280860	241868	108	0.04%
काशीराम नगर	236350	191433	43	0.02%
उत्तर प्रदेश	32475784	26015592	13128	0.05%

सभी आंकड़े सामाजिक, आर्थिक एवं जातिगण जनगणना-2011 से लिये गये हैं।

परिशिष्ट-4

उत्तर प्रदेश में भूमिहीन परिवारों का विवरण

जिले का नाम	कुल परिवार	कुल जमीन (एकड़ में)	भूमिहीन परिवारों की संख्या	भूमिहीन परिवारों की संख्या (प्रतिशत)
सहारनपुर	418340	680989.9	311150	74.38%
मुजफ्फरनगर	502344	1517313	349788	69.63%
बिजनौर	495304	3318788	317722	64.15%
मुरादाबाद	521305	733125.7	281868	54.07%
रामपुर	299340	455938.1	171981	57.45%
ज्योतिबा फुले नगर	228537	640892.1	190962	83.56%
मेरठ	261180	675324.8	155968	59.72%
बागपत	161232	828566.4	103869	64.42%
गाजियाबाद	295081	621383.7	198394	67.23%
गौतम बुद्ध नगर	289590	905295.3	232529	80.30%
बुलन्दशहर	427475	825466.5	203329	47.57%
अलीगढ़	418563	883250.1	203269	48.56%
महामाया नगर	199901	534556.4	114667	57.36%
मथुरा	294772	823994.9	148501	50.38%
आगरा	375187	594635.8	191756	51.11%
फिरोजाबाद	265386	619497.8	112275	42.31%
मैनपुरी	258844	591705.1	86993	33.61%
बदायूं	480817	1711258	183928	38.25%
प्रदेश बरेली	475247	1133659	257234	54.13%
पीलीभीत	303726	540849.1	125488	41.32%
शाहजहाँपुर	405601	693762.7	210817	51.98%
लखीमपुर खीरी	640850	1161204	281297	43.89%
सीतापुर	714977	1068299	259456	36.29%

हरदोई	617677	1730102	228082	36.93%
उन्नाव	481545	663623.6	177424	36.84%
लखनऊ	278203	429795.6	118679	42.66%
रायबरेली	569800	760619	225588	39.59%
फर्रूखाबाद	249331	524883.7	105668	42.38%
कन्नौज	237103	436823.1	70661	29.80%
इटावा	213944	1049563	75770	35.42%
औरैया	209864	1860620	89473	42.63%
कानपुर देहात	310765	630280.3	146966	47.29%
कानपुर नगर	289213	5821961	183074	63.30%
जालौन	211977	1497271	73384	34.62%
झांसी	212906	1695928	69446	32.62%
ललितपुर	186311	1132941	45241	24.28%
हमीरपुर	174857	630582.1	65717	37.58%
महोबा	127389	551752.8	38628	30.32%
बांदा	269240	638524.8	144236	53.57%
चित्रकूट	152132	445145.3	66756	43.88%
फतेहपुर	415053	564316.4	194437	46.85%
प्रतापगढ़	494720	1838739	173092	34.99%
कौशाम्बी	255994	857293.9	164015	64.07%
इलाहाबाद	705588	5045259	372273	52.76%
बाराबंकी	533550	813455.4	215824	40.45%
फैजाबाद	377144	415301.2	124417	32.99%
अम्बेडकर नगर	322410	519264.5	88922	27.58%
सुल्तानपुर	563089	1422114	236620	42.02%
बहराइच	541484	988777.3	258040	47.65%
श्रावस्ती	179481	463018.5	57257	31.90%
बलरामपुर	293520	541365.4	120480	41.05%
गोण्डा	523254	750007.4	151738	29.00%

सिद्धार्थनगर	382311	559637.8	123761	32.37%
बस्ती	385828	583138.7	121134	31.40%
संत कबीर नगर	243670	358907.2	96811	39.73%
महाराजगंज	407828	602929.1	74748	18.33%
गोरखपुर	599152	602562	284386	47.46%
कुशीनगर	574969	580451.6	138670	24.12%
देवरिया	450667	743661.4	113451	25.17%
आजमगढ़	615199	6091620	164567	26.75%
मऊ	262251	1097929	102907	39.24%
बलिया	426709	753655.3	243315	57.02%
जौनपुर	596098	1320023	234992	39.42%
गाजीपुर	476147	2052577	202235	42.47%
चन्दौली	265851	361483.4	170374	64.09%
वाराणसी	343657	1169906	194732	56.66%
संत रविदास नगर	191630	249617.7	106556	55.61%
मिर्जापुर	340748	505464.1	211864	62.18%
सोनभद्र	288433	766475.1	159701	55.37%
ईटा	241868	579872.3	70434	29.12%
काशीराम नगर	191433	445815.7	59388	31.02%
उत्तर प्रदेश	26015592	75704810	11649175	44.78%

उपरोक्त आंकड़े सामाजिक, आर्थिक एवं जातिगण जनगणना-2011 से लिये गये हैं।

पब्लिक एडवोकेसी इनीशिएटिव्स फॉर राइट्स एण्ड वैल्यूज़ इन इण्डिया
ई-46, आधार तल, लाजपत नगर-3, नई दिल्ली-110024
दूरभाषः 011.29841266, 65151897 | ईमेलः pairvidelhi1@gmail.com | वैबसाइटः www.pairvi.org